इनफारमेशन पैक

मध्यप्रदेश में खेती के संकट

विकास संवाद

ई–7 / 226 प्रथम तल, धनवन्तरी काम्पलेक्स के सामने, अरेरा कॉलोनी, शाहपुरा, भोपाल मध्यप्रदेश

फोन 0755–4252789

ईमेल vikassamvad@gmail.com

प्रस्तुति

शिवनारायण गौर

मध्यप्रदेश में खेती के संकट

छत्तीसगढ़ अलग राज्य के होने के बाद क्षेत्रफल की दृष्टि से मध्यप्रदेश भारत का तीसरा और जनसंख्या की दृष्टि से सातवा बढ़ा राज्य है । मध्यप्रदेश एक कृषि प्रधान प्रदेश है। मसलन यहां मुख्य जीविकोपार्जन का आधार खेती है। खेती और उससे सम्बंधित सेवाओं का प्रदेश की अर्थव्यवस्था में 31 प्रतिशत योगदान होता है। प्रदेश की 74 प्रतिशत आबादी गांवों में निवास करती है। नेशनल सेम्पल सर्वे आर्गेनाइजेशन के 55 राउण्ड के सर्वे 1999–2000 के अनुसार 84 प्रतिशत ग्रामीण पुरुष और 92 महिलाएं खेती पर निर्भर हैं।

किसान और उनकी जोत का क्षेत्र

जब हम बात खेती की करते हैं तो इस पर निर्भरता के विविध प्रकार हैं। किसान भी जोत के मुताबिक विविध प्रकार के हैं। मसलन एक तालिका से हम किसानों को इस तरह से देख सकते हैं:–

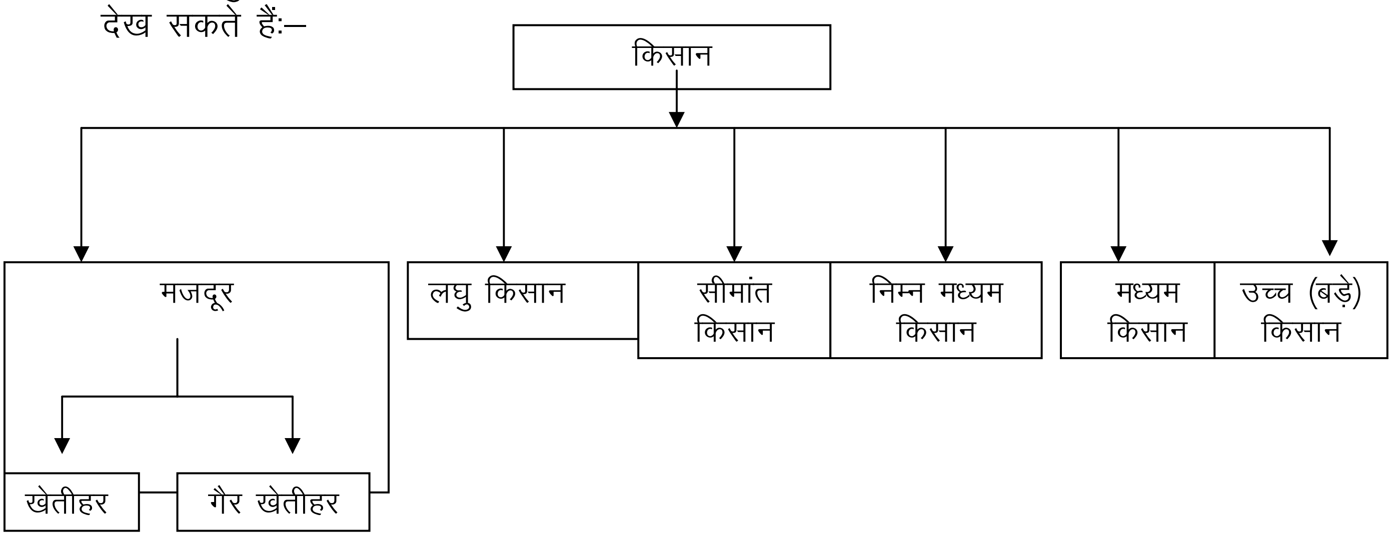

मध्यप्रदेश	1985–86	35.95% 0.44 हेक्टेयर	21.22% 1.46 हेक्टेयर	20.95% 2.79 हेक्टेयर	16.99% 6.10 हेक्टेयर	4.94% 16.76 हेक्टेयर
	1995–96	40.38% 0.46 हेक्टेयर	24.08% 1.44 हेक्टेयर	19.98% 2.76 हेक्टेयर	12.90% 5.94 हेक्टेयर	2.66% 16.08 हेक्टेयर
भारत	1985–86	57.79% 0.39 हेक्टेयर	18.45% 1.43 हेक्टेयर	13.64% 2.77 हेक्टेयर	8.14% 5.96 हेक्टेयर	1.97% 17.21 हेक्टेयर
	1995–96	61.60% 0.40 हेक्टेयर	18.70% 1.42 हेक्टेयर	12.30% 2.73 हेक्टेयर	6.10% 5.85 हेक्टेयर	1.20% 17.21 हेक्टेयर

- ❖ बड़े किसानों की संख्या कम हो रही है। यह मुख्य रूप से पारिवारिक बंटवारे के कारण है।
- ❖ छोटे किसानों के हाथ से ज़मीन बिक रही है। उनके आंकड़े इसमें नज़र नहीं आ रहे हैं। क्योंकि उनका अब काम मजदूरी हो गया है।
- ❖ यहां दिया दूसरा आंकड़ा रकबे के औसत साइज का है।

इतनी ज्यादा संख्या में खेती से जुड़े लोगों के बावजूद खेती की हालत खस्ता है। और इस संकट का मतलब है कि प्रदेश की बहुतायत जनसंख्या के सामने खतरा है। 2001 में जारी हुए राष्ट्रीय मानव विकास प्रतिवेदन के अनुसार मध्यप्रदेश के करीब 22 मिलियन (दो करोड़ बीस लाख) ग्रामीण लोग गरीबी रेखा के नीचे गुजारा करते हैं। खेती से सबंधित विभिन्न अध्ययन बताते हैं कि कई तरह की समस्याएँ इस क्षेत्र में हैं।

खेती के मुद्दे

- **जोतो की संख्या में बदलावः**—यदि यहां दी गई तालिकाओं को देंखे तो स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं कि किसानों की संख्या में लगातार तबदीली हो रही है। इनके कारणों को तलाशकर और उनका विश्लेषण करके इस उभारा जा सकता है।
- **घाटे की खेतीः**—आंकड़े बता रहे हैं कि खेती घाटे का सौदा होते जा रही है। उत्पादन लागत का बढ़ना और उत्पादन में ठहराव के कारण ऐसी स्थिति बन रही है। ठीक ठाक ढंग से विभिन्न आंकड़ों का विश्लेषण करके इसे तलाशा जा सकता है।
- **समर्थन मूल्यः**—एक मोटी जानकारी के अनुसार गेहूं की उत्पादन लागत से भी कम समर्थन मूल्य सरकार द्वारा तय किया जा रहा है। इस बात की पड़ताल करने की जरूरत है। पिछले कुछ सालों में समर्थन मूल्य में हुए बदलाव और अन्य वस्तुओं के मूल्यों में हुए बदलाव के तुलनात्मक अध्ययन से इस बात को समझना आसान होगा।
- **खेती का कंपनीकरणः**—संविदा खेती के जरिए खेती को कंपनियों के हाथों में देने की तैयारी की जा रही है। इससे खेती में व्यापक बदलाव होगा। इस मुद्दे को फील्ड के अनुभवों के आधार पर देखा जाना चाहिए।
- **चौपाल का जंजालः**—आईटीसी के सोया चौपाल के अलावा भी बहुत सी कंपनियों ने चौपाल बनाए हैं। इन चौपालों का अध्ययन किया जाना चाहिए इसके प्रभाव किसानों पर क्या हो रहे हैं? भविष्य में क्या खतरे हैं? इस सबको देखा जाना चाहिए। यहां आईटीसी के बारे में काफी जानकारी दी गई है शेष कंपनियों के बारे में जानकारी प्राप्त की जानी चाहिए।
- **हरित क्रांति का प्रभावः**—दूसरी हरित क्रांति की प्रक्रिया सरकार चला रही है। पहली हरित क्रांति के क्या प्रभाव हुए इसे देखने की जरूरत है। दूसरी हरित क्रांति का भी विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- **कृषि नीति का विश्लेषणः**—संविधान के अनुसार कृषि राज्य का विषय है लेकिन इस सबके बावजूद भी राज्य में कोई कृषि नीति अब तक नहीं बनाई गई है। इस बात को जानने और विश्लषण करने की जरूरत है। राष्ट्रीय कृषि नीति भी सन् 2000 में बनाई गई थी वर्तमान में इसकी स्थिति क्या है इसे देखना चाहिए।
- **किसान आयोगः**—सरकार ने दो साल पहले राष्ट्रीय किसान आयोग एवं राज्य किसान आयोग का गठन किया है। इन आयोगों की रपट का विश्लेषण किया जाना चाहिए। उन पर कितना अमल किया जा रहा है? उनकी अनुशंसाएं क्या हैं? आदि।
- **फसल बीमा योजनाः**—फसल बीमा योजना का शिगूफा एक अध्ययन का मुद्दा है। इसके बारे में लोगो के अनुभवों को जानने समझने की जरूरत है।
- **उद्यानिकी मिशनः**—ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में केन्द्र सरकार ने उद्यानिकी मिशन नामक एक योजना रखी है। मध्यप्रदेश के 18 जिले इस योजना में शामिल किए गए हैं। इसके तहत क्या होगा? उसके असर क्या होंगे? समझने की जरूरत है।
- **एग्री एक्सपोर्ट जोनः**—मध्यप्रदेश में विभिन्न फसलों को लेकर पांच एग्री एक्सपोर्ट जोन बनाए गए हैं। इन जोंनो का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाना चाहिए। इसका खेती पर क्या असर हो रहा है, इसकी पड़ताल की जानी चाहिए।

- ❖ **एग्री बिजनेस मीटः**–खजुराहों मीट और फिर भोपाल की एग्री बिजनेस मीट दोनों में तमाम कंपनियों ने कई कई वायदे किए थे उन वायदों या उनके काम का लोंगो पर क्या असर हो रहा है इसे देखने की जरूरत है।
- ❖ **संविदा खेतीः**–मध्यप्रदेश में संविदा खेती के लिए विभिन्न कंपनियां रुचि ले रही हैं लेकिन संविदा खेती के किसानों पर क्या असर होंगे, इसे देखने की जरूरत है।
- ❖ **फसल चक्र में बदलावः**–खेती के व्यवसायीकरण के चलते फसल चक्र में बदलाव आ रहा है। स्वाभाविक है इसका लोंगो के जीवन स्तर पर प्रभाव होगा, मसलन खाद्यान्न सुरक्षा की दृष्टि से इस विषय को परखा जाना चाहिए।
- ❖ **मजदूरी के दिनः**–खेती एक रोजगार का जरिया हुआ करती थी लेकिन वर्तमान में इससे रोजगार के कितने अवसर मिल पा रहे हैं इस बात को भी समझा जा सकता है।

मध्यप्रदेश की खेती के आंकड़े और सच्चाई

मध्यप्रदेश के कृषि क्षेत्र में वर्ष 1998–99 से 2004–05 तक के सात वर्षों की अवधि में निरंतर 10 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई है। वर्ष 1998–99 में राज्य की आय (जी.डी.पी.) में कृषि का योगदान 38. 85 प्रतिशत था जो लगातार गिरते हुए 2004–05 में 28.55 प्रतिशत पर आ गया। इसका अर्थ यह हुआ कि किसानों की आमदनी पिछले सात वर्षों में 10 प्रतिशत तक कम हो गई है। किसानों की कृषि क्षेत्र में प्रति व्यक्ति आय जो 1998–99 में 4575 रूपए थी, वह आज 2004–05 में घटकर 4120 रूपए रह गई। इसकी तुलना में प्रदेश की प्रति व्यक्ति औसत आय जो 1998–99 में 6584 रूपए थी, वह 2004–05 में बढ़कर 8238 रूपए हो गई है।

प्रदेश के कृषि क्षेत्र में प्रति व्यक्ति आय में गिरावट से सबसे ज्यादा प्रभावित वे सीमांत (1 हैक्टेयर से कम) एवं लघु (1 हैक्टेयर से 2 हैक्टेयर तक) कृषक हुए हैं, जो कुल कृषकों के 60 प्रतिशत या 6 लाख के लगभग होते हैं। शेष 40 प्रतिशत कृषक अपने पारिवारिक जीवन निर्वाह के अनुकूल फसल प्राप्त कर लेते हैं। प्रदेश के 203 लाख हैक्टेयर कृषि क्षेत्र का 70 प्रतिशत (142 लाख हैक्टेयर) की खरीफ फसलें मानसून पर निर्भर हैं।

आज प्रदेश के 203 लाख हैक्टेयर के सकल कृषि क्षेत्र का 91.30 प्रतिशत (185.30 लाख हैक्टेयर) भाग खाद्यान, दलहन एवं तिलहन उत्पाद करने के निमित्त उपयोग में आ रहा है। शेष 8.70 प्रतिशत क्षेत्र (17.70 लाख हैक्टेयर) वाणिज्यिक फसलों (गन्ना, कपास) तथा उद्यानिकी फसलों (फल, सब्जी, मसाले आदि के अंतर्गत है)

प्रदेश में खरीफ मौसम में ली जाने वाली फसलों में मुख्यतः सोयाबीन है, जिसका क्षेत्रफल 46 लाख हैक्टेयर है, जो कुल कृषि क्षेत्र का लगभग 23 प्रतिशत है। यह पूर्णतः मानसून पर ही निर्भर है। प्रदेश के लगभग 10 लाख कृषक सोयाबीन की फसल लेते हैं। इनमें 35 प्रतिशत सीमांत एवं 25 प्रतिशत लघु कृषकों की श्रेणी में आते है। जो कुल सोयाबीन उगाने वाले कृषकों का 60 प्रतिशत या 6 लाख होते हैं। ये 60 प्रतिशत किसान चौपाल व्यवस्था से दूर हैं।

आज भी 85 प्रतिशत छोटे, सीमांत या खेत मजदूरों के पास जमीन का मात्र छोटा सा हिस्सा ही है। जबकि तीन–चौथाई जमीन पर 15 प्रतिशत बड़े किसान के हाथ में है। 1999–2000 के एन.एस.एस.ओ. के आंकड़ें बताते हैं कि मध्य प्रदेश में 17.5 प्रतिशत 0.01 से 0.4 हैक्टेयर के किसान हैं, 27.7 प्रतिशत 0.4 से 1.0 हैक्टेयर के है, 26.6 प्रतिशत 1.0 से 2.0 हैक्टेयर के है, 17.9 प्रतिशत 2.0 से 4.0 हैक्टेयर के है और 9.1 प्रतिशत 4 हैक्टेयर से अधिक के किसान हैं।

(कृषि विभाग की जानकारी से)

निश्चित ही हमारे सामाजिक ढांचों में खेतिहर मजदूर का यह तबका सबसे निचली पायदान से आता है। यानि दलित, आदिवासी, महिला की नियति आज भी मजदूरी तथा गुलामी करने की ही है। शायद उसकी परंपरा यही है? किसी जमाने में चैतुआ (चैत में रवि की फसल कटाई के कारण पड़ा नाम) कहे

जाने वाले ये लोग आसपास के इलाकों से दो–तीन माह की मजदूरी करने आते थे। वहीं गांव के मजदूर जो हरवाए तथा चरवाए कहलाते है को लगभग साल भर का काम मिलता था। पर मजदूरी काफी कम थी। सूखे अथवा कम पैदावार वाले इलाके से सिचिंत तथा ज्यादा पैदावार वाले इलाकों की ओर मौसमी पलायन करने का इनका सैकड़ों साल का इतिहास है। आंकड़ों की जुबानी देखें तो 2001 की जनगणना म.प्र. की कुल कार्यशील जनसंख्या में खेतिहर मजदूरों का प्रतिशत 28.7 है। इसमें अनुसुचित जाति के मजदूर 15.2 प्रतिशत और अनुसूचित जनजाति के 20.3 प्रतिशत है। वहीं देश में 29.8 प्रतिशत खेतिहर मजदूर है। भूमंडलीकरण के बाद समाज की इस बनावट में तेजी से क्षरण हो रहा है। छोटे, लघु और सीमांत किसान मजदूर बनते जा रहे हैं। और ये खेती में काम न होने के कारण शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। आज जिस नई तरह की खेती पर सरकार जोर दे रही है, ऐसी हालत में सीमांत किसान भूमिहीन होंगे। सीमांत किसान उन्हें कहते हैं जिनके पास जमीन का बेहद छोटा टुकड़ा होता है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के अनुसार देश में कुल सीमांत किसानों और भूमिहीन किसानों की तादाद में बढ़ोतरी हुई है। 1987–88 में देश में भूमिहीन और सीमांत किसानों के परिवारों की तादाद 35.4 प्रतिशत और 19.1 प्रतिशत थी जो बढ़कर 1999–2000 में 40.9 प्रतिशत और 22.3 प्रतिशत हो गई। 1991–92 में 1.0 हैक्टेयर और उससे कम भूमि के मालिकों की तादाद 70.1 प्रतिशत से बढ़कर 2002–03 में 79.0 प्रतिशत हो गई। यह सिलसिला जारी है। दुखद बात यह है कि कृषि भूमि का चालीस प्रतिशत हिस्सा केवल छह प्रतिशत बड़े किसानों के पास है। फसलों में विविधता के नारे का यह परिणाम पंजाब में तो साफ तौर पर दिखाई दे रहा है। पंजाब में जोतों का क्षेत्रफल बढ़ गया है जबकि देश के दूसरे हिस्से में जोतों का क्षेत्रफल घटा है। इसका कारण यह है कि छोटे और सीमांत किसान भूमि से बेदखल हो गए हैं और ये ज़मीनें या तो बड़े किसानों के पास चली गई हैं या फिर नए पूंजीपतियों के पास चली गईं। सारे देश में जोतो का औसत क्षेत्रफल 1985–86 में 1.69 हैक्टेयर था जो दस सालों में कम होकर 1.41 हो गया। और आने वाले दस सालों में अनुमान है कि 1 हैक्टेयर के पास पहुंच जाएगा।

नई कृषि नीति का परिणाम है कि जहां मध्यम किसान कर्ज के बोझ में दबकर आत्महत्याएं कर रहा है, वहीं छोटे व गरीब किसान अपनी जमीन बेचने पर मजबूर हो रहा है। खेत मजदूरों की बढ़ती जनसंख्या से इसका अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। वर्ष 1981 में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि मजदूरों की संख्या 25 प्रतिशत थी, जबकि 2002 में यह संख्या बढ़कर 40 प्रतिशत हो गयी है। यानि कि 21 वर्षों में 15 प्रतिशत गरीब किसानों को अपनी जमीन से हाथ धोकर खेत मजदूरों की कतार में शामिल होने पर मजबूर होना पड़ा है। जबकि खेत मजदूर पहले से ही उदारीकरण की सबसे अधिक मार झेल रहे हैं। 1981 में इन्हें वर्ष में 123 दिन काम मिलता था, जबकि 2002 में इन्हें मात्र 60 दिन ही काम मिल पाता है। कार्य दिवसों की घटती संख्या तथा खेत मजदूरों की बढ़ती संख्या से खेत मजदूरों की मजदूरी पर विपरीत असर पड़ा है। सरकार भले ही जो भी मजदूरी निर्धारित करे, देश के अधिकांश हिस्सों में इन्हें 25 से 30 रूपये प्रतिदिन की मजदूरी मिल पा रही है।

हमारे देश में कृषि पर पैंसठ प्रतिशत आबादी निर्भर है, जो देश में रोज़गार का सबसे बड़ा स्त्रोत भी है। लेकिन हरित क्रांति और खेती में तकनीकीकरण के बढ़ने के साथ कृषि में रोज़गार के अवसर लगातार कम होते चले गए। रोज़गार के इन अवसरों के कम होने का सीधा असर मज़दूरों पर ही पड़ा। खेती और उससे जुड़े काम–धंधों में रोज़गार के अवसरों में विकास की दर 2.17 प्रतिशत प्रति वर्ष थी। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण के अनुसार 1988–1994 में ये अवसर इतने कम हो गए कि अब 0.18 प्रतिशत पर आ गयी है। उसके बाद आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, राजस्थान में तो रोजगार के नए अवसर बिलकुल समाप्त हो गए हैं। अब स्थिति यह हो गई है कि लोग खेती–बारी छोड़ना चाहते हैं। 2003 में 6,638 गांवों के 51,770 घरों के सर्वेक्षण में पाया गया कि चालीस प्रतिशत किसान कर्जे में फंसे हुए हैं और हर किसान पर औसत 12,585 रूपए का कर्ज है। भारत के कुल सकल उत्पाद का पचास प्रतिशत हिस्सा कृषि से 1950 में होता था. अब वह घटकर 22 प्रतिशत हो गया है। लेकिन उस पर निर्भर आबादी की तादात् में कोई भी कमी नहीं आई है। अर्थशास्त्रियों के तर्क बचकाने है। उनके अनुसार आजादी के समय 75 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर थी, अब 69 प्रतिशत ही रह गई है। लेकिन खुशफहमी दरअसल गलतफहमी है। तब भारत की जनसंख्या 36 करोड़ थी, 75 प्रतिशत कृषि निर्भरता के हिसाब से तब 27 करोड़ आबादी कृषि आश्रित थी। अब आबादी 110 करोड़ है और अब 69 प्रतिशत के हिसाब से 75 करोड़ यानी पहले से दूनी जनसंख्या कृषि पर निर्भर हो गई है। इसी किस्म के अर्थशास्त्री किसानों के लिए अब ज्यादा ऋण बांटने का बचकाना प्रस्ताव भी कर रहे हैं।

संकट में खेती

खेती पर आने वाले खतरों को लेकर बड़ी चिंता की स्थिति इन दिनों देश भर में बनी हुई है। दिन–व–दिन खेती में नई–नई समस्याएँ आ रही हैं। स्थिति की भयावहता को पिछले कुछ वर्षो में पंजाब, हरियाणा, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश और महाराष्ट्र में किसानों की आत्महत्याओं की बढ़ती संख्याओं से समझा जा सकता है। अभी पिछले साल तो मध्यप्रदेश में भी ऐसी इक्का–दुक्का घटनाएँ हुईं हैं। लेकिन खेती के ट्रेंड में आ रहे बदलाव से लगता है कि कभी यहाँ भी दूसरे राज्यों की भांति संकट आ सकता है। पर वास्तव में उसकी सुध किसी को नहीं है। जबकि खेती पर आ रहे इस संकट के दौर में भी देशी विदेशी बड़ी–बड़ी कंपनियाँ फायदा उठाने के लिए तत्पर हैं। विडंबना तो यह है कि ये कंपनियाँ और राज्य व देश की सरकारें खेती–किसानी और किसानों की कुछ ज़्यादा ही चिंता प्रकट कर रही है। और क्यों न हो क्योंकि सरकार के ही आंकड़े बता रहे हैं कि अब किसान खेती से पीछा छुड़ाना चाहते हैं। इसलिए वे अब खेती करने के लिए आगे आने की कोशिश कर रहीं हैं।

हाल ही में आए नेशनल सेम्पल सर्वे आर्गेनाईजेशन (NSSO) के आंकड़े इसका अच्छा उदाहरण हैं। इस सरकारी संस्था के आंकड़े बताते हैं कि खेती की हालत से परेशान 40 फीसदी किसान कृषि से पीछा छुड़ाना चाहते हैं, जबकि 27 फीसदी किसान मानते हैं कि खेती फायदे का करोबार नहीं रहा। इसके अलावा 8 फीसदी किसान कहते हैं कि खेती जोखिम का काम है। कुल मिलाकर 75 प्रतिशत किसान अब खेती नहीं करना चाहते हैं। शायद इसीलिए अब सरकार चाह रही हैं कि बड़ी–बड़ी देशी–विदेशी कंपनियाँ खेती करें। हालांकि इसकी शुरुआत काफी पहले हो चुकी है। पर कुछ कानूनी बाधाएँ इस काम में आ रही थी जिन्हें सरकार अब दूर करने की तैयारी में है। जैसे मण्डी एक्ट को बदलने की बात कही जा रही है। प्रधानमंत्री सलाह दे रहे हैं कि कृषि उत्पाद विपणन समिति (एपीएमसी) कानून में बदलाव किया जाए ताकि ठेके पर मुक्त मार्केटिंग को मंजूरी दी जा सके। संस्थागत खुदरा व्यापार हो सके, कृषि प्रसंस्करण उद्योग के लिए कच्चे माल की सहजता से आपूर्ति हो सके, प्रतिस्पर्द्धी व्यापार हो और नई मार्केटिंग नीतियाँ ईजाद हों। इस सबका इशारा खेती में निजी निवेश की ओर है।

प्रदेश में खेती में निजीकरण की प्रक्रिया

गौरतलब है कि कई साल पहले से निजीकरण की यह प्रक्रिया देश में जारी है। और मध्यप्रदेश इस दौड़ में सबसे आगे है। सन् 2000 में नेशनल इंस्ट्टीयूट आफ एग्रीकल्चर एक्सटेंशन में एक बड़ा सेमिनार आयोजित किया गया था। इसमें 11 राज्यों के प्रतिनिधियों के अलावा कई कंपनियों के आला अफसर शामिल हुए। मध्यप्रदेश के तात्कालीन मुख्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह तथा तात्कालीन संचालक (कृषि) श्री जी एस कौशल भी इस बैठक में थे। मध्यप्रदेश इस पूरी सेमिनार में चर्चा का विषय बना रहा। प्रदेश में पब्लिक प्रायवेट पार्टनरशिप की नीति पर बातचीत हुई। उस समय मुख्यमंत्री ने मध्यप्रदेश को गौरान्वित महसूस करते हुए निजी कंपनियों को प्रदेश में आमंत्रित किया। इसकी शुरुआत होशंगाबाद से की गई।

5 नवम्बर 2001 को होशंगाबाद जिले के पंवारखेड़ा में तात्कालीन मुख्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह ने धानुका ग्रुप के साथ प्रदेश सरकार द्वारा संचालित मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में भागीदारी की पहल की। धानुका ग्रुप और प्रदेश सरकार ने कृषि क्षेत्र में निजी क्षेत्र की भागीदारी के समझौते पर हस्ताक्षर किए। एक जानकारी के मुताबिक करीब दस बारह देशी–विदेशी कंपनियों ने होशंगाबाद को अपना कार्यक्षेत्र बनाया है। इसमें से कुछ प्रयोग करने के बाद असफल होकर भाग भी गईं हैं। जैसे मोनसेंटों नाम की अमेरिकी कंपनी ने जिले में मक्के के बीज वितरित करने के माध्यम से प्रवेश किया था परन्तु काफी विरोध के बाद फिलहाल उसका काम सीधे बंद हो गया है। उल्लेखनीय है कि इस कंपनी ने एक स्वयंसेवी संस्था के जरिए काम शुरू किया था। इसके अलावा रेलिस इंडिया, हिन्दुस्तान लीवर तथा आईसीआईसीआई बैंक भी जिले के पिपरिया क्षेत्र में किसानों के साथ संविदा खेती जैसे प्रयोग कर चुकीं हैं। फिलहाल ये कंपनियाँ भी सीधे काम नहीं कर रही हैं लेकिन वे पिपरिया के इस प्रयोग को एक सफलतम प्रयोग तो बता ही रहीं हैं। मतलब आज नहीं तो कल वे फिर से आएंगीं। एक और कंपनी जैन एरीगेशन जिले के बाबई ब्लाक में प्याज़ की खेती कर रही है। यह कंपनी भी किसान से दो साल के लिए कान्ट्रेक्ट करती हैं।

होशंगाबाद में एशिया का सबसे बड़ा एकमात्र कृषि फार्म बाबई में स्थिति है। इस फार्म पर भी कई कंपनियों की हमेशा से निगाहें रही हैं कभी रिलांइस ने इसे हथियाने की कोशिश की तो कभी कोई और कंपनी प्रस्ताव लेकर आ गई। स्थानीय किसानों के दबाव के कारण हालांकि अब तक यह फार्म बिकने से

बचा हुआ है। पर अभी भी कुछ न कुछ प्रयोग के बहाने कंपनियाँ अपनी ज़ोर आजमाईश कर ही रही हैं। महेन्द्रा शुभ–लाभ, कारगिल, माईको तथा कुछ अन्य कंपनियाँ भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से खेती में होशंगाबाद जिले में प्रयोगरत हैं। कुल मिलाकर इन कंपनियों को खेती में अच्छी खासी गुंजाईश नज़र आ रही है। और बात केवल होशंगाबाद की ही नहीं है पूरे प्रदेश में निजी कंपनियों ने खेती में प्रवेश कर लिया है या फिर करने की तैयारी में हैं। आईटीसी ने तो बड़े पैमाने पर अपना जाल बिछा ही लिया है।

चौपाल का जाल

किसानों और आम लोगों के लिए शायद यह नाम नया नहीं है। चौपाल किसान के लिए एक सांस्कृतिक शब्द है। गाँव की एक ऐसी जगह जहाँ पर गाँव के किसान बैठकर अपने दुख–सुख की बातें करते हैं। खेती किसानी कैसी चल रही है, उसपर बातचीत होती है। लेकिन इस चौपाल शब्द का इस आईटीसी कंपनी ने अर्थ ही बदल दिया है। आईटीसी की चौपाल आम किसानों के सुखदुख को बांटने की जगह नहीं बल्कि एक व्यापारिक प्रतिष्ठान के रूप में विकसित हो रही हैं। कंपनी ने पूरे मध्यप्रदेश में सोया चौपाल नाम से ई चौपाल का काम शुरू किया है। गौरतलब है कि यह कंपनी अन्य प्रदेशों में भी अलग अलग नामों से चौपालों का संचालन कर रही है। मसलन उत्तरप्रदेश में गेंहू, कर्नाटक में काफी तथा आन्ध्रप्रदेश में कुछ अन्य फसल की खरीदी के लिए ई चौपाल संचालित कर रही है। लगभग ढाँचा एक जैसा ही होता है। जैसे गाँव में एक जगह, आमतौर पर गाँव के किसी बड़े प्रतिष्ठित किसान के घर चौपाल बनाया जाता है। यहाँ कंप्युटर और इंटरनेट से मंडियों के भाव जानने की सुविधा होती है। फिर किसान अपनी फसल चौपाल के माध्यम से बेच सकता है। इस केन्द्र पर एक संचालक होता है। वैसे खरीदी केन्द्र पास के किसी शहर में होते हैं। किसानों को वहाँ अपनी फसल ले जाना होता है। लेकिन सोया चौपाल का संचालक उसके लिए एक पर्ची देता है। इस पर्ची के आधार पर जहाँ किसान को खरीदी केन्द्र पर सुविधा मिलती है वहीं संचालक को उसका कमीशन मिल जाता है। सन् 2000 में मध्यप्रदेश में सोया चौपाल की शुरूआत कंपनी ने की थी। सन् 2004 तक कंपनी के 1750 सोया चौपाल मध्यप्रदेश में थे। और ऐसा माना जा रहा है कि करीब 9000 गाँवों तक कंपनी पहुंची है।

आईटीसी के किसानों को तात्कालीक फायदे मिल रहे हैं। मसलन उसे मंडी की असुविधाओं का सामना नहीं करना पड़ रहा है। समय पर तुलाई और पैसे भी समय पर मिल रहे हैं। अमूमन दाम भी ज्यादा ही मिल रहे हैं। लेकिन विचारणीय पहलू हैं कि ये लाभ कब तक मिलेगें। अंततः मंडी में आज एक प्रतिस्पर्द्धा होती है। कई व्यापारी फसल के दाम देने के लिए तैयार होते हैं। लेकिन चौपाल में प्रतिस्पर्द्धा की गुंजाईश खत्म होने वाली है। यदि मंडी एक्ट में बदलाव किया जाता है या भविष्य में मंडी को ही समाप्त कर दिया गया तो फिर इस तरह की कंपनियों का पूरे बाज़ार पर कब्जा होगा। वे मनमाने दामों पर फसल खरीदेंगी। अपनी शर्तो पर खरीदी की जाएगी। और उस वक्त किसानों के पास कोई विकल्प भी नहीं होगा। वैसे भी आज आईटीसी छह राज्यों में 5200 ई चौपालों के जरिए 31000 गांवों तक पहुंचने की बात कह रही हैं और यही नहीं कंपनी का मानना है कि आगामी कुछ सालों में वह 15 राज्यों के एक लाख गाँवों (देश में कुल छह लाख गांव हैं) तक पहुंचने की योजना में है। उसका मानना है कि यह काम वह 20000 ई चौपालों के जरिए करते हुए दस मिलियन (एक करोड़) किसानों तक पहुंच जाएगी। यदि कंपनी यह सब कर पाती है तो फिर पूरे देश में इस कंपनी की ही मोनोपाली (एकाधिकार) होगी।

देश में क़रीब 37.7 प्रतिशत खेत 0.4 हेक्टेयर से भी छोटे आकार के हैं। 28.4 प्रतिश खेत 0.4 से 1.0 हेक्टेयर के बीच के क्षेत्रफल के हैं, एक से 2 हेक्टेयर क्षेत्रफल वाले खेतों की संख्या 18.9 है। मात्र 15 खेत ही 2 हेक्टेयर से अधिक के क्षेत्रफल के हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो 85 किसान इतने छोटे हैं कि उनका चौपाल से कोई रिश्ता बनता ही नहीं है, दरअसल हब पर जो इलेक्ट्रॉनिक तौल प्रणाली है, जिनमें अनाज के साथ–साथ वाहन भी तुलता है, वह छोटे किसानों के लिए कतई उपयुक्त नहीं है। छोटे किसानों की इतनी उपज तो होती नहीं कि उससे पूरी ट्रेक्टर–ट्रॉली भर जाए। अगर चार–छह किसान ट्रॉली भर माल इकट्ठा कर लें और थोड़े– थोड़े पैसे इकट्ठे करके भाड़े का इंतज़ाम भी कर लें तो अलग–अलग किसानों के माल का वज़न निकालने के लिए ट्रॉली को कई दफा तौलना होगा।

बात केवल आई टी सी की नहीं है आज तमाम कंपनियां खेती के बाजार में आ रही हैं उनके स्वामित्व व एकाधिकार से जो 'सुघड़' बाज़ार बचेगा, उसमें छोटे किसानों को अंत–परंत अपने छोटे–मोटे ज़मीन के टुकड़े को बेचने के सिवाय कोई चारा नहीं बचेगा तथा काम की तलाश में उन्हें नए गांव–शहर का ठिकाना ढूंढ़ना पड़ेगा। राष्ट्रीय सैम्पल सर्वेक्षण संगठन के आंकड़े हमें बताते हैं कि 1993–1994 से

1999–2000 के बीच ग्रामीण भारत में भूमिहीन परिवारों की संख्या का अनुपात 53 प्रतिशत से बढ़कर 58 प्रतिशत हो गया है। इसके अलावा दूसरे भी ऐसे अनेक हैं, जो अपनी बीवियों के भरोसे ज़मीन छोड़कर काम की तलाश में दूसरी जगह चले गए हैं। नतीज़ा ये है कि ग्रामीण भारत में ऐसे परिवारों की संख्या भी बढ़ी है, जिनमें औरतें ही मुखिया हैं।

कुछ खास बिन्दु निजीकरण के

सारी दुनिया में खेती एक जिंस बन गई है। इससे भारतीय खेती में भी कंपनी या निजी क्षेत्र की घुसपैठ काफी बढ़ी है। नतीजा यह है कि भारतीय खेती का ढांचा बहुत तीव्र बदलावों के दौर से गुज़र रहा है। इस बदलाव के 4 प्रमुख बिन्दु हैं:

1. केन्द्र और राज्य के स्तर पर सरकारें कृषि क्षेत्र में कंपनियों के निवेश को सक्रिय सहयोग दे रही हैं और मौजूदा कानूनी प्रावधानों को भी बदल कर उनके प्रवेश को आसान बना रही हें।

2. आमतौर पर समूचे किसान समुदाय और खास तौर पर छोटे खिलाड़ियों की सुरक्षा के लिए बनाई गई सार्वजनिक एजेंसियों ने अपने निर्धारित लक्ष्यों को बहुत ही कम हासिल किया है। बहुत सारी संस्थाओं व निकायों ने अपने आपको नाकाबिल व भ्रष्ट साबित किया है। इन संस्थाओं व निकायों की इज्जत सरकार और मीडिया की निगाहों में तो गिरी ही है, साथ ही इन संस्थाओं से लाभान्वित होने वाले किसान समुदाय के बीच भी इनकी कोई साख नहीं है। यदि इन सार्वजनिक संस्थाओं को दुरूस्त करने के मजबूत उपाय नहीं किए जाते, तो निजी कंपनियों के लिए खुला मैदान छोड़कर ये पूरी तरह खत्म हो जाएंगी।

3. पूंजीवादी (अमीर) किसानों की राजनीतिक रूप से प्रभावशाली लॉबी, जो पहले पंजाब और हरियाणा में उभरी थी, अब पूरे हिंदुस्तान में फैल रही है। इनको बड़े कॉर्पोरेट घरानों का भी अच्छा–खासा आर्थिक समर्थन हासिल है। आखिरकार कॉपोरेट क्षेत्र ऐसी जगह पर घुसपैठ नहीं कर सकता, जहां उनकी मेहमानवाजी करने को भी कोई न हो और जहां पर्याप्त अतिशेष मौजूद न हो।

4. जैसा कि हमेशा, हर जगह इतिहास में होता आया है, पूंजीवादी वाली खेती के बढ़ने से अनगिनत छोटे किसानों ने अपनी जमीनें गंवाई हैं और सर्वहारा वर्ग की तादाद लगातार बढ़ती जा रही है। इनमें महज किसान ही नहीं, बल्कि भूमिहीन खेत मजदूर, छोटे–छोटे दस्तकार, छोटे व्यापारी और अन्य छोटे–छोटे बिचौलियों के काम करने वाले लोग भी शामिल हैं। सर्वहारा की इस नई उभरती हुई भीड़ के पास कोई रोजगार नहीं है, कहीं और तो पहले भी नहीं था, अब खेती में भी नहीं बचा।

बिलकुल साफ है कि यह बेदखल होते छोटे और सीमांत (हाशिए के) किसानों और किसानी से जुड़े इसी तरह के छोटे खिलाड़ी अपनी रोज़ी–रोटी के लिए कुछ उत्पादक अवसर तभी पा सकते हैं, जब बाजार की जारी प्रक्रिया में राज्य और सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा भारी–भरकम हस्तक्षेप किया जाए। लेकिन विडंबना यह है कि इन असंगठित और बिखरे हुए लोगों को राजसत्ता के भीतर अपनी जायज जगह हासिल करने का कोई तजुर्बा नहीं है और इसीलिए वे उस जगह को भी नहीं देख पाते, जो सैद्धान्तिक रूप से उनके लिए मौजूद है। यह परिस्थिति कुछ निडर और रचनात्मक कदम उठाए जाने की मांग करती है। ताकत और इच्छाशक्ति खो चुकीं सार्वजनिक एजेंसियों को फिर से वैसे ही खड़ा करने का कोई फायदा नहीं होने वाला। हमें संपूर्ण पुर्नरचना के लिए राजनीतिक इच्छा शक्ति की ज़रूरत है।

दूसरी हरित क्रान्ति

कृषि में 4 प्रतिशत की वार्षिक उच्च्य वृद्धि दर प्राप्त करने की तात्कालिक आवश्यकता, विभिन्न स्तरों पर अनेक राज्य और एजेंसियों द्वारा किए गए कृषि सुधारों की गुणवत्ता तथा मांग में सुधार करके ही प्राप्त की जा सकती है, ऐसा सरकारी स्रोत कह रहे हैं। इन सुधारों का उद्देश्य सतत आधार पर तथा समग्र ढांचे में संसाधनों के प्रभावी प्रयोग और मृदा, जल तथा पारिस्थितिकी के संरक्षण पर करने के साथ ही ऐसे समग्र ढांचों में जल, सड़कों और विद्युत जैसी ग्रामीण आधारभूत संरचना का वित्त पोषण शामिल करने की बात कही जा रही है।

11वीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पत्र में इस प्रकार के समग्र ढांचे पर व्यापक रूप से प्रकाश डाला गया है तथा कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए निम्नलिखित नीति का सुझाव दिया है:

(क) सिंचित क्षेत्र की वृद्धि दर को दुगुना करना।

(ख) जल प्रबंधन में सुधार करना, वर्षा जल का संचयन तथा जल संभर विकास।

(ग) निम्नस्तरीय भूमि का पुनरुद्धार करना तथा मृदा गुणवत्ता पर ध्यान देना।

(घ) प्रभावी विस्तार के माध्यम से ज्ञान के अंतर को पाटना।

(ड) उच्च मूल्य वाली उपज, फल, सब्जियां, फूल, जड़ी–बूटी, मसाले, औषधीय पौधे, बांस, बायोडीजल जैसे विभिन्न प्रकार की फसलें उगाना। किन्तु ऐसा करते समय खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित किये जाने के लिए पर्याप्त उपाय किए जाने चाहिए।

(च) पशु पालन और मत्स्य पालन को बढ़ावा देना।

(छ) वहनीय दरों पर आसान ऋण उपलब्ध कराना।

(ज) प्रोत्साहन ढांचा और बाजारों की कार्यप्रणाली को सुधारना

(झ) कृषि सुधार संबंधी मुद्दों पर फिर से ध्यान देना। राष्ट्रीय कृषक आयोग ने ऐसे ढांचे के लिए नींव पहले ही रख दी है।

राज्यों में कार्यक्रम इस प्रकार बनाए तथा कार्यान्वित किए जाएँगे कि वे प्रादेशिक परिस्थितियों के अनुकूल ही हों, जिनमें कृषि जलवायु दशाओं और उपयुक्त अनुसंधान एवं विकास की उपलब्धता का समावेश हो एवं समय पर और पर्याप्त विस्तार और वित्त की सुविधा हो।

फसल का कई प्रजातियों में विघटन दलहनों के उत्पादन का उच्च स्तर प्राप्त करने में मुख्य बाधा बना रहा है। ये अनाजों की तुलना में आनुवांशिक रूप से कम उपज और कम निविष्टि वाली फसलें हैं और इनकी पैदावार निरन्तर वर्षा सिंचित दशाओं के तहत सीमान्त तथा उप–सीमान्त भूमि पर की जाती है। विदेशों के दलहनों की उपलब्धता सीमित होने के कारण इनका घरेलू उत्पादन बढ़ाने के लिए संकर किस्मों का विकास करना इसकी पहली जरूरत बन गई है।

भारत में कृषि पर किया जाने वाला अनुसंधान एवं विकास व्यय इसके उच्च सामाजिक प्रतिलाभ के बावजूद अंतराष्ट्रीय मानकों से कम है। क्षेत्र विशिष्ट बीजों तथा उनके प्रयोग का विकास विशेष रूप से जल की प्रचुरता वाली पूर्वी पट्टी में होने से इन क्षेत्रों में उपज के स्तरों को बढ़ा सकता है। आगामी वर्षों में आधुनिक प्रौद्योगिकियों द्वारा समर्थित अभिवृद्धि अनुसंधान एवं विकास संबंधी व्यय और संगत संस्थानों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। अनुसंधान एवं विकास में वर्षा–पोषित और सूखा संभावित क्षेत्रों, सूखा रोधी और जैव प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों के लिए जिम्मेदार जैसी फसलों तथा जैव प्रौद्योगिकी जिसमें वृद्धि और निर्यात की संभावना हो, आदि पर ध्यान दिया जाना होगा। उचित क्रियान्वयन किए जाने से, कृषक समूह, पंचायती राज संस्थाओं और निजी क्षेत्रों की भागीदारी से आजीविका सुरक्षा बढ़ाने के लिए जुलाई, 2006 में शुरू की गई राष्ट्रीय कृषि नवीकरण परियोजना अग्रणी कृषि विज्ञानों में मूल और नीतिगत अनुसंधान को सुदृढ़ करने में काफी सहायक होगी ये सब वायदे किए जा रहे हैं। **(आर्थिक समीक्षा 2006–2007)**

राष्ट्रीय कृषि नीति का विश्लेषण

गौरतलब है कि सन् 2000 में भारत सरकार के तात्कालीन कृषिमंत्री श्री नीतिश कुमार ने नयी कृषि नीति को घाषित किया था। 2000 के बाद से कोई कृषि नीति नहीं बनी है। हां राष्ट्रीय किसान आयोग ने अपनी नीति से संबंधित अनुशंसाएँ जरूरी जारी की हैं। संसद में पेश यह नीति मूलतः अंग्रेजी में तैयार हुई हैं, और हिन्दी मसविदे पर अनुवाद की छाया, अटपटे शब्दों व भाषा की कृत्रिमता बहुत स्पष्ट है। अंग्रेजी में राष्ट्रीय कृषि नीति का बनना स्वाभाविक है, क्योंकि ऐसी हर नीति सरकार में बैठे अफसर व विशेषज्ञ ही तैयार करते हैं, जिनकी भाषा अंग्रेजी ही होती है। अब तो अफसरों व विशेषज्ञों के ऊपर उनके मालिक विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष तथा विश्व व्यापार संगठन ही सारी नीतियां लिखवा रहे हैं, उनकी भी भाषा अंग्रेजी ही है। राष्ट्रीय कृषि नीति पर भी विश्व बैंक और विश्व व्यापार संगठन की मुहर बहुत स्पष्ट है।

सन् 2000 में भारत सरकार के तात्कालीन कृषिमंत्री श्री नीतिश कुमार ने नयी कृषि नीति को घाषित किया था। 2000 के बाद से कोई कृषि नीति नहीं बनी है। हां राष्ट्रीय किसान आयोग ने अपनी नीति से संबंधित अनुशंसाएँ जरूरी जारी की हैं।

नई राष्ट्रीय कृषि नीति के प्रारंभिक पांच पैराग्राफ तो सही व निर्दोष प्रतीत होते हैं। इनमें भारतीय जीवन में खेती का स्थान, कृषि विकास की कमियां, बढ़ती विषमताओं, भूमंडलीकरण से पैदा हुई जलिटताओं, खेतिहर समुदायों की दयनीय स्थिति, पर्यावरणीय असंतुलन आदि को स्वीकार करते हुए कृषि नीत के उद्देश्यों को बताया गया है। उद्देश्य भी ऐसे हैं जिनसे असहमति की गुंजाइश कम है, जैसे कृषि उत्पादन में 4 प्रतिशत से अधिक वृद्धि की दर, जल–जमीन–जैव विविधता की सुरक्षा एवं संसाधनों के समुचित उपयोग पर आधारित विकास, समतामूलक विकास, मांग आधारित विकास (इस पर कुछ सवाल हो सकते है) और टिकाऊ विकास। कुल मिलाकर यदि राष्ट्रीय कृषि नीति के मसविदे का प्रथम पांच पैरा पढ़ें तो कृषिमंत्री बहुत क्रांतिकारी, जनवादी व पर्यावरणवादी सोच के आदमी मालूम पड़ते है।

लेकिन इसके बाद आगे पढ़ने पर कृषि नीति का असली चेहरा और असली इरादा सामने आता है। इधर–उधर की लफ्फाजियों को निकाल दें तो राष्ट्रीय कृषि नीति बहुराष्ट्रीय पूंजीवाद, भूमंडलीकरण, कथित उदारीकरण और निजीकरण के एजेंडा को ही आगे बढ़ाती है। असली सवालों से जी चुराते हुए यह नीति वे ही समाधान पेश करती है जो समस्याओं के मूल में है।

उदाहरण के लिए दूसरे पैरा में ही इसमें स्वीकार किया गया है कि नब्बे के दशक में कृषि के विकास में ढील आई है। क्या यही एक स्वाकारोक्ति अपने आप में नब्बे के दशक में अपनायी गई आर्थिक नीतियों पर प्रश्नचिन्ह नहीं खड़ा करती है? कृषि नीति के दस्तावेज में ढील के कारण बताये गये हैं – उपयुक्त पूंजी की कमी तथा आधारभूत संरचनाओं का अभाव, बाजार में उत्पादों की मांग की सीमाएं, कृषि उत्पादों के आवागमन, रखरखाव एवं बिक्री पर नियंत्रण आदि। कृषि नीति घोषणा भी करती है कि ''कृषि उत्पादों'' के घरेलू बाजार का पूर्ण उदारीकरण कर दिया जाएगा और कृषि उत्पादों की आवाजाही पर प्रतिबंध धीरे–धीरे समाप्त कर दिये जाएँगे।

इसी प्रकार कृषि उपज की मांग बढ़ाने के लिए इस कृषि नीति में एक ही फारमूला है – निर्यात। पूरे मसविदे में कम से कम एक दर्जन बार ''निर्यात'' शब्द आता है। लेकिन ''निर्यातोन्मुखी विकास'' पर कई सवाल खड़े हो रहे हैं, उन्हें यह नीति बिलकुल नजरअंदाज करती है। सच तो यह है कि दुनिया के गरीब देशों को निर्यात बढ़ाने का उपदेश देने वाले अमीर देशों का दुनिया के व्यापार पर इतना नियंत्रण है कि वे अपने किसानों और उद्योगों को बाहरी प्रतिस्पर्धा से पूरी सुरक्षा देते हैं, उत्पादन व निर्यात के लिए भारी अनुदान देते हैं, और उन्हीं वस्तुओं को अपने देश में आने देते हैं जिनकी उन्हें जरूरत है। लेकिन निर्यात बढ़ाने के लिए बैचेन गरीब देश आपस में प्रतिस्पर्धा करते हैं और इस चक्कर में अपनी पैदावार बहुत सस्ते दामों पर अमीर देशों के अमीर उपभोक्ताओं की सेवा में पेश करते रहते हैं।

दूसरी ओर निर्यात पर जोर देने के चक्कर में एक नुकसान यह हो रहा है कि हम अपने देश की सौ करोड़ आबादी की जरूरतों को पूरा करने की बजाए अमीर देशों के अमीर उपभोक्ताओं की विलासितापूर्ण जरूरतों पर ध्यान केन्द्रित कर रहे है। ''खाद्य सुरक्षा'' की बात राष्ट्रीय कृषि नीति के पहले पैरे में आयी है, लेकिन उसके बाद वे भूल गए हैं कि देश की विशाल आबादी का पेट भरना हमारी कृषि नीति का पहला व प्राथमिक उद्देश्य होना चाहिए। यह आबादी यदि गरीबी व कुपोषण को कुचक्र से बाहर निकलेगी, तो खाद्यान्नों व कृषि उपज की मांग भी बढ़ेगी और कृषि उत्पादन में भी तेजी आएगी।

पहले पैरे में ही यह भी कहा गया है '' कृषि का विकास खाद्य क्षेत्र में राष्ट्रीय स्तर पर आत्मनिर्भरता के लिए तो जरूरी है ही........''। लेकिन जिस ढंग से विश्व व्यापार संगठन की शर्तों के तहत खाद्यान्न व कृषि उपज के आयात को भारत सरकार द्वारा खुली छूट दी जा रही है उससे तो आत्मनिर्भरता की बात अतीत की हो गयी है। सबसे बढ़िया उदाहरण तो खाद्य तेलों का है। तिलहनों का उत्पादन बढ़ाते–बढ़ाते हम नब्बे के दशक के प्रारंभ में लगभग आत्मनिर्भरता पर पहुंच गये थे। आयात मात्र तीन प्रतिशत रह गया था। लेकिन पिछले दो वर्षों से खाद्य तेलों के आयात को खुली छूट देने से देश में अमरीका के सोया–तेल और मलेशिया के पाम–आईल की बाढ़ आ गयी है।

भारतीय खेती पर आयात के सबसे बड़े संकट पर राष्ट्रीय कृषि नीति आश्चर्यजनक रूप से मौन है। सत्ताइसवें पैरे में जाकर यह मात्र दो–तीन पंक्तियों में इतना कहती है कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार की लगातार समीक्षा की प्रणाली विकसित की जाएगी और करों को समुचित सुरक्षा प्रदान की जायेगी। लेकिन खाद्य तेलों के अनुभव से स्पष्ट है कि मात्र आयात शुल्क बढ़ाने से आयात कम नहीं होते, क्योंकि उन वस्तुओं के निर्यातक देशों की अनुदान देने की क्षमता असीमित है।

विश्व व्यापार संगठन की गुलामी राष्ट्रीय कृषि नीति में भी निर्लज्जता से स्वीकार की गयी है, जहां यह कहा गया है कि ट्रिप्स समझौते के तहत फसलों की नई किस्मों पर शोध तथा प्रजनन को प्रोत्साहन देने के लिए पौधों की सुरक्षा का कानून बनाया जाएगा (पैरा 23)। इस कारण से कंपनियों को अपने नए बीजों के विषय में पेटेंट जैसा ही एकाधिकार स्थापित करने की सुरक्षा मिलेगी। उनके मुनाफे बढ़ जाएँगे। वास्तव में मोनसेन्टो जैसी अनेक बदनाम कंपनियां भारत में अपना कारोबार शुरू करने के लिए इसी कानून की राह देख रही हैं।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों को समर्पित इस कानून की ज्यादा आलोचना होने लगी तो इसके नाम से ''किसानों के अधिकार'' को भी जोड़ दिया। लेकिन कानून के वर्तमान मसौदे की 89 धाराओं में मात्र एक धारा किसानों के लिए है और उसमें भी किसानों के अधिकार के नाम पर यह कहा गया कि किसान कंपनियों के रजिस्टर्ड बीज से पैदा उपज को बेचने या रखने के लिए स्वतंत्र होंगे, लेकिन उसको ''बीज'' के रूप में बेच नहीं पाएँगे। यह अधिकार है या मजाक? उपज तो किसान बेचेंगे ही, नहीं तो बीज का इस्तेमाल ही क्यों करेंगे?

इस नए कानून के साथ भारत की खेती में जैव टेक्नालॉजी और जीन–इंजीनियरिंग का बड़े पैमाने पर प्रवेश होगा, जो आज दुनिया की बहुराष्ट्रीय कंपनियों के सबसे बड़े और फलते–फूलते धंधों में से एक है। राष्ट्रीय कृषि नीति में कम से कम चार जगह इसके उपयोग और प्रोत्साहन की बात कही गई है। लेकिन इसका स्वागत करने से पहले जीन–संशोधित बीजों और प्रजातियों पर पूरी दुनिया में जो सवाल उठ रहे हैं उन पर भी गौर कर लेना चाहिए।

कृषि नीति में जीन–संशोधित प्रजातियों के अलावा अन्य कई प्रकार से आधुनिक टेक्नोलॉजी का सहारा लेने की बात कही गयी है। ग्रीनहाउस, शीत घरों की श्रृंखला, बूंदाबांदी या टपक सिंचाई, कंप्यूटरीकरण, मछली पकड़ने की नावों के मशीनीकरण, गहरे समुद्र में मछली उद्योग के तंत्र आदि की चर्चा इसमें है।

इस कृषि नीति का एक हिस्सा ''खतरा प्रबंधन'' को समर्पित है। एक प्रकार से यह स्वीकार किया है कि भारतीय खेती में जोखिम और खतरे बढ़े हैं। इसके लिए इस कृषि नीति में एक ही दवा है, वह है राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना। लेकिन फसल बीमा योजना का अभी तक का अनुभव बहुत खराब रहा है, और उससे किसानों को कोई मदद नहीं मिली है, सिर्फ बीमा कंपनियों का धंधा बढ़ा है।

ठेका, संविदा या कॉन्ट्रेक्ट खेती

भले ही संविदा, ठेका या कॉन्ट्रेक्ट खेती की सोच या विचार आज समय की मांग हो। पर हमारे देष में स्थानीय स्तर पर इस खेती का रूप परंपरा से चला आ रहा है। बटाई, सिकमी, अधिया या खोट जैसे नामों से अलग–अलग क्षेत्रों में पुकारी जाने वाली इस खेती का मूल मकसद एक अवधि विषेष के लिये खेती को खरीद लेना ही है। मूलतः षहरों में रहने वाले अनुपस्थित जमीदार, नवाब, जोतदार, बड़े किसान, मालगुजार या दीवान अपनी खेती छोटे–छोटे किसानों से इसी पद्धति से कराते आये हैं। इनकी षर्ते और तरीके भी कम षोषणकारी और अमानवीय नहीं होते थे। बस फर्क इतना था कि ये स्थानीय और स्वदेषी होते थे बहुराष्ट्रीय नहीं। ये सांमत मारते तो थे पर मरने नहीं देते थे, पर आज की ये कंपनियां छोटे–मोटे किसानों को भी भिखमंगा बनाकर आत्म हत्या की और पहुंचा रही है। दूसरे स्तर पर साधनों के अभाव में छोटे–मोटे किसान भी अपनी जमीन सिकमी (ठेका) पर दे देते थे। और धीरे–धीरे सिकमी देते हुये ये जमीन उनके हाथ से भी निकल जाती थी। सिकमी का समझौता प्रायः जमीन की पैदावार, दूरी, सिंचाई और दोनों पक्षों की आपसी समझ के हिसाब से होता था।

> *बड़ी कंपनियों, क्रेडिट सप्लायर (बैंक) तथा विशेषज्ञों के गठजोड़ से संविदा खेती शुरू की जायेगी। किसानों के साथ एक एग्रीमेन्ट होगा जिसके तहत् पूर्व निर्धारित दरों पर उन्हे अपना उत्पाद कंपनियों को बेचना पड़ेगा। फिलहाल संविदा खेती का कोई कानून नहीं बनाया गया है। अतः किसान व अन्य पक्ष अदालत से न्याय प्राप्त करने में असमर्थ होगे।*

असल में हमारे यहां खेती जीविका और जीवन का एक हिस्सा जरूर थी, पर वस्तु, बाजार या व्यवसाय नहीं थी। आज की कंपनियों की पहली शर्तें खेती को वस्तु बनाकर व्यवसाय के लिये बाजार तक

पहुंचाना है। इसलिये आज की ठेका खेती का मूल सोच ही लाभ पर आधारित है। इसके लिये हमारी सरकार ने डब्लू.टी.ओ. तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय दवाब में नई कृषि नीतियों की घोषणा की है। सबसे खतरनाक तो हमारे सीलिंग या भूमि हदबंदी कानूनों को समाप्त करना है। जो हजार, दो हजार एकड़ के फार्मो के लिये जरूरी है। कृषि नीति कहती है कि ऐंसी खेती से प्रोद्योगिकी का हस्तांतरण, पूंजी का अंर्तप्रवाह और तिलहन, कपास, चाय, काफी, नारियल तथा फलों का बाजार मजबूत हो सकेगा।

संविदा खेती को बढ़ावा देने के लिये कृषि सुधार प्रस्ताव 2004 में केन्द्रीय कृषि मंत्री के नेतृत्व में सारे प्रदेशों के कृषि मंत्रियों की बैठक में इस प्रस्ताव पर लंबी चर्चा हुई। उसके अनुसार कृषि सुधार प्रस्ताव में तीन प्रमुख बातें हैं, पहला कार्य मंडियों का निजीकरण, दूसरा अनुबंध खेती व लीज की खेती में मौजूद प्रतिबंधात्मक कानून (भूमि हदबंदी कानून) को खत्म करना और तीसरा भूमि शेयर कंपनियों का उदय। इस कानून से भारत में पचास करोड़ से ज्यादा लघु और सीमांत किसानों यानि 3 से 5 एकड़ खेती वाले किसानों के लिए अपनी पुश्तैनी खेती से बेदखल होना पड़ेगा। भारत की नई राष्ट्रीय कृषि नीति के मसौदे में फसलों के विभिन्नीकरण (डायवरसीफिकेशन) की वकालत की गई है। इसके तहत् किसान खाद्यान्न फसलों को पैदा करने के स्थान पर केशक्राप का उत्पादन करेंगे तथा उनके उत्पादित माल का निर्यात होगा। लिहाजा विदेशी मुद्रा में इजाफा होगा, साथ ही कृषकों की आर्थिक स्थिति सुधरेगी। फसल विभिन्नीकरण में बड़ी पूंजी की आवश्यकता होगी जिसकी निजी क्षेत्र से आपूर्ति की जायेगी। अतः बड़ी कंपनियों, क्रेडिट सप्लायर (बैंक) तथा विशेषज्ञों के गठजोड़ से संविदा खेती शुरू की जायेगी। किसानों के साथ एक एग्रीमेन्ट होगा जिसके तहत् पूर्व निर्धारित दरों पर उन्हे अपना उत्पाद कंपनियों को बेचना पड़ेगा। फिलहाल संविदा खेती का कोई कानून नहीं बनाया गया है। अतः किसान व अन्य पक्ष अदालत से न्याय प्राप्त करने में असमर्थ होगे। दूसरा दुखद पहलु यह है कि एक तरफ देश के संसाधन विहीन गरीब किसान होगे तथा दूसरी तरफ धन/सुविधा संपन्न कंपनियां। क्या इस खेल के खिलाड़ी समान हैसियत रखते है और क्या खेल का मैदान समान धरातल पर है?

पहले अनुबंध कृषि व कारपोरेट कृषि केवल वृक्षारोपण कार्यक्रम और बेकार पड़ी जमीन के विकास तक ही सीमित थे। लेकिन 2000 में नई कृषि नीति (पहली) की घोषणा के बाद बुनियादी क्षेत्र में भी इसे अमल में लाया जा रहा है। कृषि क्षेत्र से जुड़ी निजी कंपनियों के सामने कृषि पैदावार की गुणवत्ता बरकरार रखने की बड़ी चुनौती थी क्योंकि इसका निर्धारण खरीदार करते हैं। इसके अलावा दूसरा महत्वपूर्ण मसला गुणवत्ता बरकरार रखते हुए समय पर आर्डर पूरा करना था। पेप्सीको ने इस सिलसिले में महत्वपूर्ण पहल करते हुए अनुबंध कृषि को नया आयाम दिया। कंपनी ने पंजाब के सगरूर जिले में संसाधनों पर आधारित अनुबंध के तहत कृषि समझौता किया। कंपनी ने किसानों को बाजार मुहैया कराने के साथ पैदावार की समीक्षा के अलावा पैदावार में सुधार के उपाय सुझाए। इसके जरिए किसानों को अच्छे खरीदार भी मिल गए और उन्हें अपनी पैदावार का उचित मूल्य मिलने लगा। इसी तरह ट्रेक्टर का उत्पादन करने वाली प्रमुख कंपनी महिंद्रा एंड महिंद्रा ने भारतीय किसानों को ध्यान में रखते हुए शुभ–लाभ सेवा की शुरूआत की। इसके तहत दो बातों पर मुख्य रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया। जिसमें पहला सामुदायिक कृषि को बढ़ावा देना और दूसरा एक ही केन्द्र पर किसानों की आवश्यकताओं के अनुरूप जरूरी सभी सुविधाएं उपलब्ध कराना।

1980 के दशक से भारतीय कृषि को विश्व बाजार से जोड़ने की मुहिम शुरू हुई। कृषि व्यवसाय वाली कंपनियां 1990 के दशक से जोरदार ढंग से आगे आईं। सरकार ने 'वाशिंगटन आम राय' पर आधारित भूमंडलीकरण को स्वीकार कर उन्हें बढ़ावा दिया। इसे बड़ी कंपनियों और विश्व खाद्य और कृषि संगठन जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं का पुरजोर समर्थन मिला है। यह नुस्खा है 'कांट्रेक्ट फार्मिग' या ठेके पर खेती का। विश्व खाद्य और कृषि संगठन के चार्ल्स ईंटन और एंड्यू डब्लू शेफर्ड ने 'कांट्रेक्ट फार्मिग पार्टनरशिप्स फॉर ग्रोथ' नामक पुस्तक में इस नुस्खे पर विस्तार से प्रकाश डाला है। इसके अंतर्गत किसानों और ठेके पर खेती करने की इच्छुक कंपनियों के बीच करार होगा। किसान अपनी जमीन उन्हें बेच देंगे या लगान की तय दर पर दे देंगे। चाहें तो ऐसा करने वाले किसान कंपनियों के फार्मो पर मजदूर के रूप में काम करेंगे। इस प्रकार कृषि पारिवारिक न होकर पूरी तरह पूंजीवादी हो जाएगी। पैदावार संबंधी सारे फैसले क्या उगाएं, कैसे उगाएं और किनके लिए उगाएं कंपनियां करेंगी। दूसरे शब्दों में, फसलों के चुनाव, खेती के तौर–तरीकों, निवेश और प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल और बाजार के बारे में निर्णय कंपनियां ही लेंगी। इन सब निर्णयों का आधार मुनाफा बढ़ाना ही होगा। मुनाफे को अधिकतम करने के लिए लागत को कम से

कम करने का प्रयास होगा। इस प्रकार कृषि का उद्देश्य रोजगार के अवसर बढ़ाना कतई नहीं होगा। नगरों में संगठित क्षेत्र में रोजगार के अवसर न मिलने पर वे अनौपचारिक (इन्फार्मल) क्षेत्र में लगेंगे।

कहा जा रहा है कि अनुबंध या ठेका–खेती (कांट्रेक्ट फार्मिग) अपनाने से ही भारतीय गांव और किसान सुखी होंगे। इस ओर पहला कदम पंजाब ने 1980 के दषक में बढ़ाया जब पेप्सी फूड्स लि. ने वहां बाईस करोड़ रूपयों की लागत से टमाटर से विभिन्न उत्पाद बनाने के लिए कारखाना लगाया। चूंकि टमाटर पूरी मात्रा में उपलब्ध नहीं हो रहा था इसलिए 'पेप्सीको' नामक उससे जुड़ी कंपनी ने अनुबंध–खेती षुरू की और 1990 के दषक में बासमती चावल, मिर्च, मूंगफली और आलू भी उगाना षुरू कर दिया।

संसद में दी गई जानकारी के अनुशार मध्यप्रदेश में अंनुबंध (ठेका) खेती

वैज–ओ फ्रेश लि. इंदौर फ्रिटो ले इंण्डिया	*आलू ब्राऊन*
पैप्सीको इण्डिया लि. बीकानेर वाला फूड्स	*प्याज, लहसुन*
जैन सिंचाई जलगांव, उद्योग मंदसौर (मध्यप्रदेश)	*धनिया*
राजस्थान इंटरनेशनल इंदौर कन्नान व कं. इंदौर मैरिको	*कुसुम*
रालिस, डाबर	*गेंहू दवाइयां, प्लांट्स और हर्बल*

हंस, अगस्त 2006 से प्राप्त जानकारी

शुरुआत में वर्ष 2000 में, मध्यप्रदेश की दिग्विजय सिंह सरकार ने आंशिक रूप से 1970 के राज्य कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम में संशोधन किया। इस संशोधन से निजी खरीदारों को मंडी प्रांगण के बाहर खरीदी केंद्र स्थापित करने के लिये मंडी समितियों द्वारा लाइसेंस देने का प्रावधान बन गया। इसके लिये एक वक्त में ही रू. 10,000 लाइसेंस शुल्क देने व कुछ सुरक्षा निधि जमा कराने का प्रावधान बनाया गया। 9 सितंबर 2003 को केंद्र सरकार ने विभिन्न राज्य सरकारों के परामर्श से एक मॉडल कानून का अंतिम प्रारूप तैयार किया। जिसे नाम दिया गया 'राज्य कृषि उत्पाद विपणन (विकास एवं नियमन) अधिनियम, 2003' इस मॉडल अधिनियम के तहत देश में कृषि बाजारों के प्रबंधन व विकास में सार्वजनिक व निजी भागीदारी को प्रोत्साहित करने, निजी मंडियां व सीधे खरीदी केंद्र कायम करने के प्रावधान किए गए हैं। इन प्रावधानों में देश में अनुबंध खेती की व्यवस्थाओं को प्रोत्साहन देने व नियंत्रित करने के कानून एवं अधिनियम भी शामिल हैं। यह कानून मौजूदा कृषि उपज मंडी समिति की भूमिका को भी पुनर्भाषित करता है। ताकि इसका नई विपणन व्यवस्था तथा अनुबंध खेती के साथ ठीक तालमेल बैठ जाए।

एग्री एक्सपोर्ट जोन अथवा कृषि निर्यात क्षेत्रः–

- **भारत सरकार ने पूरे देश के खेतीहर इलाके को अलग अलग फसलों के उत्पादन के हिसाब से 45 एग्री एक्सपोर्ट जोन में बांटा है।**
- **मध्यप्रदेश में पांच एग्रो एक्सपोर्ट हैं।**

भूमंडलीय दुनिया में निर्यात बाजार की मांग के अनुरूप फसल पैदा करने के लिये मध्यप्रदेश में आलू, प्याज, लहसुन, धनिया, मैथी तथा गेहूं के लिये विभिन्न जिलों को मिलाकर अलग–अलग पाँच एग्री एक्सपोर्ट जोन (कृषि निर्यात क्षेत्र) बनाये हैं। आलू, प्याज और लहसुन के जोन में इन्दौर, धार, उज्जैन, देवास, मन्दसौर, नीचम, रतलाम, और शाजापुर कुल आठ जिले शामिल हैं। मालवा क्षेत्र में पैदा होने वाले आलू में पानी और शक्कर की मात्रा कम रहती है। इस विशिष्ट गुण के कारण मालवा के आलू की किस्में स्वादिष्ट होती हैं। इसकी माँग अंतरराष्ट्रीय बाजार में ज्यादा है। इसी तरह यहां की प्याज और लहसुन भी प्रसिद्ध है। धनिया और मैथी के उत्पादक जोन में उज्जैन, रतलाम, मन्दसौर, नीमच, शाजापुर और गुना को मिलाकर सात जिले शामिल हैं। यहां की धनिया सुगंध और स्वाद के करण पूरे देश में बिकती है। यहां के मैथी दाने की मांग भी बहुत हैं। इसी तरह गेहूं उत्पादक जोन में उज्जैन, धार, शाजापुर, देवास, रतलाम,

मन्दसौर, नीमच, इन्दौर, भोपाल, सीहोर, विदिशा, रायसेन, होशंगाबाद, हरदा, गुना और नरसिंहपुर कुल सोलह जिलों को मिलाकर एग्री एक्सपोर्ट ज़ोन बनाया गया है। गेहूं के जोन में प्राथमिकता प्रदेश की विशिष्ट प्रजाति *'ड्यूरम'* गेहूं (कठिया) के लिये है। कहते हैं प्रोटीन और विटामिनों से भरपूर ड्यूरम किस्म (मालवी गेहूं) की 'मालवश्री,' 'मालवा शक्ति', मालवा रत्न' जैसी नयी किस्में विकसित की गयी हैं। तीन एग्री एक्सपोर्ट ज़ोन की सफलता के बाद कुछ माह पहले ही छिंदवाड़ा, बैतूल और होशंगाबाद जिलों को मिलाकर संतरे का और शिवपुरी, गुना, विदिशा, रायसेन, नरसिंहपुर, और छिंदवाड़ा को मिलाकर दालों (चना और मसूर) का एग्री एक्सपोर्ट जोन बनाया गया है।

● **सरकारी दावे और बदलते कानूनः–** ऐइजेड के माध्यम से सरकार दावा करती है कि इससे कृषि क्षेत्र में आर्थिक निवेश ग्रामीण जीवन में सुधार एवं खेती में गुणात्मक बदलाव आएगा। पर इसके लिये जिन विभिन्न नियम कानूनों को बदला जाएगा, प्राकृतिक संसाधनों का बेरहमी से दोहन किया जायेगा, इसकी कीमत कौन चुकाएगा। एग्री एक्सपोर्ट जाने के लिए देखें सरकार क्या सुविधा दे रही है।

- नियन कानूनों में सरलीकरण एवं अधोसंरचना में सुधार होगा।
- ऊर्जा नीति में एईजेड हेतु कैप्टिव पावर प्लाट हेतु ड्यूटी फ्री डीजल देने के लिये विद्युत मंडल की सहमति।
- सिंचाई सुविधा एवं जल संरक्षण सिंचाई स्त्रोतों की क्षमताओं का दोहन, ड्रिप एवं स्प्रिंकलर एरीगेशन सुविधाओं का विस्तार।
- मानव संसाधन क्षमताओं का विकास यथा, मंदसौर में उद्यानिकी महाविद्यालय, उद्यानिकी प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना।
- निर्यात की मूलभूत आवश्यकताओं के अनुरूप पैकिंग, मटेरियल का अध्ययन एवं विकास।
- कानूनों में संशोधन जैसे मंडी एक्ट में संधोधन।
- नियंत्रण नियमन आदेशों का समापन।
- भूमि बंदोबस्त अधिनियम के स्थान पर भूमि प्रबंधन अधिनियम।
- कार्पोरेट्स को कृषि क्षेत्र से जोड़ना।
- कान्ट्रेक्ट फार्मिग को बढ़ावा देना।
- इन फसलों को वाणिज्य कर से छूट।
- निर्यात के इच्छुक निवेशकों की समस्याओं का निराकरण 15 दिन के अंदर किया जाएगा।
- खेत से बंदरगाह तक के परिवहन व्यय में पचास प्रतिशत का अनुदान दिया जाएगा।
- गैर वन पड़त भूमि पर एईजेड के तहत ढांचागत उद्योग लगाने पर 50 प्रतिशत की लीज रेट में छूट दी जाएगी।

● **एईजेड के उद्देश्य कहते है कि**

- अंतरराष्ट्रीय गुणवत्ता की फसलों का उत्पादन।
- पोस्ट हारवेस्ट मैनेजमेंट हेतु आवश्यक सुविधाओं का विकास।
- चयनित फसलों के मूल्य संवर्धन हेतु कार्य।
- उक्त उत्पादन एवं उसके उत्पादों के निर्यात में निरंतरता बनाना।

उक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु एपीडा (कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद, निर्यात, विकास प्राधिकरण) की सलाह से एक विस्तृत कार्ययोजना तैयार की गई है और उसके अनुसार कार्य किया जा रहा है। प्रत्येक जिले में ऐसे कृषकों के चयन की कार्यवाई की जा रही है जो उक्त फसलों की कान्ट्रेक्ट फार्मिग या बाई–बेक के आधार पर उसके उत्पादन या विक्रय हेतु सहमत हों। इन फसलों के लिए चयनित प्रजातियों के बीज उपलब्ध कराने हेतु उद्यानिकी विभाग द्वारा कार्य प्रारंभ कर दिया गया है। निजी प्रदायक कंपनियों द्वारा भी बीज उपलब्ध कराया जा रहा है। वही कृषि निर्यात में स्व–सहायता समूह, सहकारी समितियां भी

आगे आकर सामुदायिक गुणवत्ता नियंत्रण, प्रसंस्करण, बीमारी नियंत्रण, आधुनिक भण्डारण जैसी बुनियादी सुविधाओं का विकास कर सकती है।

गेहूं, आलू, प्याज, लहसुन की निर्यात योग्य गुणवत्ता, विकसित कर निर्यात हेतु निम्न वर्गीकरण किया गया है।

- **सेवा प्रदायक–** इस श्रेणी में परीक्षण, ग्रेडिंग, इररेडियेशन, विशिष्ट भंडारण, पैक हाउस आते हैं।

- **प्रसंस्करणकर्ता–** इस श्रेणी में प्रसंस्करण उद्योग–उद्यमी हैं।

- **निर्यातक–** इनके द्वारा उत्पादित फसल अथवा प्रसंस्कृत उत्पाद को अंतरराष्ट्रीय बाजारों में विक्रय हेतु भेजने की व्यवस्था की जाती है। इस प्रकार सेवा प्रदायक, प्रसंस्करणकर्ता, निर्यातक तथा कृषकों के बीच एक कांट्रेक्ट फार्मिंग जैसी व्यवस्था की जाना है। ताकि वांछित फसलों का भरपूर उत्पादन हो सके एवं बेहतर मूल्य मिल सके। इन उत्पादों का मंदसौर, स्थित मैसर्स गार्लिको इंडस्ट्रीज द्वारा जापान, मलेशिया, आस्ट्रेलिया, ब्राजील आदि देशों में इस वर्ष रू. 110 लाख का निर्यात किया गया है। और निर्यात अभी चालू है। फ्राइटो ले इंडिया प्रा.लि. से प्रारंभिक चर्चा में 10,000 मी.टन आलू क्रय करने का अनुबंध निष्पादित हुआ है। वांछित प्रजातियों कुफरी ज्योति, कुफरी लवकर, चिपसोना आदि का उत्पादन कार्यक्रम कृषकों द्वारा लिया गया हैं।

स्वीकृत एईजेड एवं उनका कार्यक्षेत्रः–

कृषि उत्पाद	चयनित जिले
आलू, प्याज, लहसुन	इंदौर, धार, उज्जैन, देवास, मंदसौर, नीमच, रतलाम एवं शाजापुर
सीड स्पाइस–धनिया, मेंथी	उज्जैन, रतलाम, मंदसौर, नीमच, शाजापुर, राजगढ़ एवं गुना
गेहूं (शरबती एवं ड्यूरम)	नीमच, मंदसौर, रतलाम, उज्जैन, धार, शाजापुर, देवास, इंदौर, भोपाल, सीहोर, विदिशा, रायसेन, होशंगाबाद, हरदा, गुना एवं नरसिंहपुर
दालें–मसूर, चना	गुना, शिवपुरी, विदिशा, रायसेन, नरसिंहपुर एवं छिंदवाड़ा।
संतरा	छिन्दवाड़ा, होशंगाबाद एवं बैतूल

कृषि विभाग, मध्यप्रदेश की जानकारी के मुताबिक

एसईजेड में शामिल केन्द्र सरकार के विभाग

- कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा)
- राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड (एनएचबी)
- खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय
- स्माल फारमर्स एग्री बिजनेस कंसोर्टियम (एसएएफसी) लघु कृषक कृषि व्यापार संघ नई दिल्ली।
- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर)
- कृषि मंत्रालय
- वाणिज्य विभाग।
- भारतीय पेकेजिंग संस्थान

राज्य स्तर के विभाग

- कृषि विभाग
- उद्यानिकी संचालनालय।
- कृषि विश्वविद्यालय
- राजस्व विभाग
- मध्यप्रदेश विद्युत मण्डल
- वित्तदायी संस्थाएं, सहकारी बैंक, नाबार्ड

राष्ट्रीय कृषक आयोग

डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन की अध्यक्षता वाले राष्ट्रीय कृषक आयोग ने दिसम्बर, 2005 और अक्टूबर, 2006 के बीच में पांच रिपोर्टें पेश की। आयोग की मुख्य सिफारिशों को राष्ट्रीय कृषक नीति के संशोधित प्रारूप में शामिल किया गया हैं। ये हैं–भूमि, जल, पशुधन और जैव संसाधनों को शामिल करके परिसंपदा में सुधार, विस्तार, प्रशिक्षण और जानकारी, संयोजकता, क्रेडिट और बीमा, को शामिल करके किसान मूलक समर्थन सेवाएं सुनिश्चित करना एवं लाभकारी विपणन, निविष्टि एवं सुपुर्दगी सेवाएं, तथा कृषि विश्वविद्यालयों में पाठ्यचर्या सुधार। सिफारिश की गई अन्य प्रमुख पहलों में शामिल हैं– कृषि को संविधान की समवर्ती सूची में लाना, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा एवं सम्प्रभुता बोर्ड की स्थापना करना, सार्वजनिक वितरण प्रणाली का सार्वभौमिकीकरण, भारतीय व्यापार संगठन की स्थापना, न्यूनतम समर्थन मूल्य को कम से कम उत्पादन लागत से 50 प्रतिशत से अधिक करने के साथ कृषि लागत एवं मूल्य आयोग को स्वशासी सांविधिक संगठन बनाना और ग्रामीण गैर–कृषि आजीविका पहल (आरएनएफएलआई) आरम्भ करना। ग्रामीण गैर–कृषि आजीविका पहल जब कार्यान्वित की जाएगी तो कृषि पर निर्भर काफी अधिक व्यक्तियों को समाहित किया जा सकेगा। उक्त सिफारिशें सरकार के पास विचाराधीन हैं। तथापि, आयोग द्वारा की गई सिफारिशों की तरह कृषि और सहकारिता विभाग द्वारा बहुत से कार्यक्रम पहले से क्रियान्वित किए जा रहे हैं।

राज्य कृषि आयोग

किसानों के समग्र विकास की बात की दुहाई देते हुए दिनांक 13 सितम्बर, 2006 को मध्यप्रदेश राज्य कृषि आयोग का गठन किया गया है। आयोग ने अपनी एक रपट प्रस्तुत की है। इस रपट के अनुसार राज्य आयोग की कुछ अनुशंसाएं निम्न हैंः–

कृषि को लाभकारी बनाना एवं कृषि उपज के मूल्य लाभकारी हों यह भी मुख्य प्राथमिकता होनी चाहिए।

कृषि उत्पादन में उपयोग होने वाले आदानों (खाद, बीज, कीटनाशक दवाओं बिजली, पानी आदि) की व्यवस्था समय से किए जाने हेतु एक स्पष्ट नीति बनाई जावे जिससे किसानों को समय पर आदान मिलें। जिससे वे समय पर खेती कर सकें।

जैविक खेती का प्रचार प्रसार किया जाना चाहिए।

औद्योगिक क्षेत्रों हेतु कृषि भूमि का बलिदान नहीं होना चाहिए।

किसानों को आकस्मिक विपदाओं से बचाने के लिए किसान कोष की स्थापना एवं प्रबंधन होना चाहिए।

रेलवे की तरह अलग से कृषि बजट की अवधारणा पर भी विचार हो।

आयोग की पूरी रपट को देखें तो इसमें उपरोक्त तरह से 44 अनुशंसाएं की गई हैं।

कृषि बीमा

भारत सरकार ने भारतीय साधारण बीमा निगम के समन्वयन से, रबी 1999–2000 मौसम से राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना नामक एक योजना आरम्भ की है। इस योजना का प्रमुख उद्देश्य प्राकृतिक आपदाओं यथा – सूखा, बाढ़, ओलावृष्टि, चक्रवात, आग, कीट/बीमारी में फसल के नुकसान के कारण किसानों को हुई हानि से उन्हें सुरक्षा प्रदान करना है ताकि आगामी मौसम हेतु उनकी ऋण पात्रता बनी रहे। भारतीय कृषि बीमा कम्पनी/लिमिटेड को दिसम्बर, 2002 में निगमित किया गया था तथा इसने अप्रैल, 2003 से कार्य प्रारम्भ करते हुए राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के कार्यान्वयन का कार्य हाथ में लिया।

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के कार्यान्वयन में, बीमा के इकाई क्षेत्र, गारण्टीशुदा आमदनी के गणन, क्षतिपूर्ति के निम्न स्तर, बीमा दावों के निपटान में विलम्ब के संबंध में कतिपय सीमाएं/कमियां देखी गई। वर्तमान योजना में उपर्युक्त सीमाओं को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय साझा न्यूनतम कार्यक्रम में फसल बीमा योजनाओं को नए सिरे से बनाए जाने का उल्लेख किया गया है। वर्तमान फसल बीमा योजनाओं में सुधारों के लिए सुझाव देने के लिए गठित एक संयुक्त दल की सिफारिशों और राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों तथा अन्य संबंधित विभागों/एजेंसियों से प्राप्त टिप्पणियों को एक संशोधित प्रारूप में प्रस्तुत किया गया है।

उद्यानिकी मिशन

कृषि मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा स्वीकृत राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन के अंतर्गत प्रदेश में वर्ष 2005–06 से राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन प्रारम्भ किया गया है। मिशन के अन्तर्गत उद्यानिकी फसलों का क्षेत्रफल 11वीं पंचवर्षीय योजना में वर्तमान उद्यानिकी क्षेत्रफल की उत्पादकता में वृद्धि कर दो गुना करने का लक्ष्य रखा गया है। प्रदेश में वर्तमान में लगभग 6.30 लाख हेक्टर उद्यानिकी क्षेत्र है जो 11वीं योजना (2007–2012) तक 12.60 लाख हेक्टर तक किया जाना प्रस्तावित है। इस योजना के अंतर्गत प्रदेश के चयनित 18 जिलों में मिशन का क्रियान्वयन किया होगा।

1. भोपाल 2. होशंगाबाद 3. बैतूल 4. छिंदवाड़ा 5. जबलपुर 6. सागर 7. इंदौर 8. खरगोन 9. खण्डवा 10. बुरहानपुर 11. धार 12. बड़वानी 13. झाबुआ 14. देवास 15. उज्जैन 16. शाजापुर 17. मंदसौर 18. रतलाम

योजना के अंतर्गत उच्च गुणवत्ता के पौध रोपण तैयार करना, संकर तथा उन्नत किस्मों के बीजोत्पादन, निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र में किया जाना है। आंवला, संतरा एवं केले के नये बगीचे तैयार किए जाना है। इसके अलावा आम, संतरा आदि के पुराने बगीचों का जीर्णोद्धार करना, मसाला फसलों का उत्पादन कार्यक्रम लेना, समन्वित कीट एवं पोषक तत्व प्रबंधन प्रणाली को लागू करना, गिरते भू–जल स्तर एवं जल स्त्रोतों के विकास एवं संवर्धन हेतु तालाबों का निर्माण करना एवं प्रसंस्करण, विपणन आदि के लिये पैक हाउसेज, ग्रामीण बाजार, रेफ्रिजरेटर रेंज आदि अधोसंरचना का विकास करना। उक्त सभी कार्यक्रम कृषकों के यहां 50 से 75 प्रतिशत सबसिडी पर किये जाना है। मिशन का क्रियान्वयन होने से मध्यप्रदेश में उद्यानिकी फसलों का क्षेत्र विस्तार, उत्पादन तथा प्रसंस्करण, मूल्य संवर्द्धन, विपणन आदि व्यवस्थाओं से कृषकों को उनके उत्पाद का उचित मूल्य प्राप्त हो सकेगा, जिससे उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार होगा, ऐसा सरकार का मानना है।

खेती से संबंधित राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय विभिन्न आँकड़े

उपज की अन्तर्राष्ट्रीय तुलना
चुनिन्दा वस्तुएं – 2004–05

मीट्रिक टन/हेक्टेयर

चावल/धान		गेहूँ		मक्का	
मिस्र	9.8	चीन	4.25	सयुक्त राज्य अमरीका	9.15
भारत	2.9	फ्रांस	7.58	फ्रांस	7.56
जापान	6.42	भारत	2.71	भारत	1.18
म्यांमार	2.43	ईरान	2.06	जर्मनी	6.69
कोरिया	6.73	पाकिस्तान	2.37	फिलीपीन्स	2.1
थाईलैण्ड	2.63	यू.के.	7.77	चीन	4.9
संयुक्त राज्य अमरीका	7.83	आस्ट्रेलिया	1.64		
विश्व	**3.96**	**विश्व**	**2.87**	**विश्व**	**3.38**

कपास		मुख्य तिलहन	
चीन	11.10	अर्जेन्टीना	2.51
संयुक्त राज्य अमरीका	9.58	ब्राजील	2.48
उज्ज़बेकिस्तान	7.98	चीन	2.05
भारत	4.64	भारत	0.86
ब्राजील	10.96	जर्मनी	4.07
पाकिस्तान	7.60	संयुक्त राज्य अमेरीका	2.61
		नाईजीरिया	1.04
विश्व	**7.33**	**विश्व**	**1.86**

स्रोत : कृषि एवं सहकारिता मंत्रालय

खाद्यान्न उत्पादन *(मिलियन टन)*

फसल/वर्ष	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	2006–07
चावल	93.3	71.8	88.5	83.1	91.8	90.0
गेहूं	72.8	65.8	72.2	68.6	69.4	72.5
मोटे अनाज	33.4	26.1	37.6	33.5	34.1	32.0
दालें	13.4	11.1	14.9	13.1	13.4	14.5
खाद्यान्न उत्पादन						
1) खरीफ	112.1	87.2	117.0	103.3	109.9	107.2
2) रबी	100.8	87.6	96.2	95.1	98.7	102.0
कुल 1 और 2	**212.9**	**174.8**	**213.2**	**198.4**	**208.6**	**209.2**

*** चतुर्थ अग्रिम अनुमान।**

स्रोत : कृषि मंत्रालय

वाणिज्यिक फसल उत्पादन

(मिलियन टन)

फसल	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	2006–07
मूंगफली	7.0	4.1	8.1	6.8	8.0	4.4
तोरिया एवं सरसों	5.1	3.9	6.3	7.6	8.1	7.6
सोयाबीन	6.0	4.7	7.8	6.9	8.3	8.7
अन्य तिलहन	2.6	2.1	3.0	3.1	3.6	2.9
कुल नौ तिलहन	20.7	14.8	25.2	24.4	28.0	23.6
कपास/	10	8.6	13.7	16.4	18.5	21.0
जूट और मेस्ता//	11.7	11.3	11.2	10.3	10.8	11.4
गन्ना	297.2	287.4	233.9	237.1	270.0	315.5

/ प्रति 170 किलोग्राम की मिलि, गांठें, // प्रति 180 कि.ग्रा. की मिलि. गांठें

* दूसरा अग्रिम अनुमान

स्रोत : कृषि मंत्रालय

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना का निष्पादन

क्र.	मौसम	शामिल किए गए किसान (लाख)	क्षेत्र (लाख हेक्टर में)	बीमित राशि (करोड़ रुपए	प्रीमियम (करोड़ रुपए)	कुल दावे (करोड़ रुपए)
1.	रबी 1999–00	5.8	7.8	356.4	5.4	7.7
2.	खरीफ 2000	84.1	132.2	6903.4	206.7	1222.5
3.	रबी 2000–01	20.9	31.1	1602.7	27.8	59.5
4.	खरीफ 2001	87.0	128.9	7502.5	261.6	493.5
5.	रबी 2001–02	19.6	31.5	1497.5	30.2	64.7
6.	खरीफ 2002	97.7	155.3	9431.7	325.5	1824.3
7.	रबी 2002–03	23.3	40.4	1837.6	38.5	188.6
8.	खरीफ 2003	79.7	123.6	8114.1	283.3	649.9
9.	रबी 2003–04	44.2	64.7	3049.5	64.1	490.7
10.	खरीफ 2004	126.9	242.7	13170.5	458.9	1037.6
11.	रबी 2004–05	35.3	53.4	3774.2	75.9	160.6
12.	खरीफ 2005	126.7	205.3	13517.7	449.9	1054.8
13.	रबी 2005–06	40.5	72.2	5069.5	104.8	252.3
14.	खरीफ 2006	66.5	101.1	7500.3	233.2	––
योग		**858.0**	**1390.1**	**83327.5**	**2565.7**	**7506.6**

* अनंतिम

मुख्य उर्वरकों की खपत *(लाख टन में)*

उर्वरक	**2001–02**	**2002–03**	**2003–04**	**2004–05**	**2005–06**	**2006–07 (अप्रैल–सित.06)′**
यूरिया	199.17	184.93	197.67	206.65	222.97	113.66
डीएपी	61.81	54.73	56.24	62.56	67.64	32.06
एमओपी	19.93	19.12	18.41	24.06	27.31	10.02
नाइट्रोजनी उर्वरक (एन)	113.10	104.74	110.77	117.13	127.23	64.68
फोस्फेटिक उर्वरक (पी)	43.82	40.19	41.24	46.24	52.04	25.75
पोटासिन उर्वरक (पी)	16.67	16.01	15.98	20.61	24.13	9.67

एन+पी+के	173.60	160.94	167.99	183.98	203.40	100.10
प्रतिशत बढ़ोतरी	3.94	–7.29	4.38	9.52	10.56	8.84

स्रोत : रसायन तथा उर्वरक मंत्रालय। * अनन्तिम

2004–05 और 2005–06 के दौरान
एन.पी.के. उर्वरकों की प्रति हैक्टेयर खपत (कि.ग्रा.)
(वर्ष 2004–05 के अनन्तिम सकल सस्यगत क्षेत्र के आधार पर)

राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	2004–05	2005–06
1. आन्ध्रप्रदेश	203.61	158.57
2. कर्नाटक	117.34	99.51
3. केरल	57.00	56.74
4. तमिलनाडु	183.67	159.07
5. पांडिचेरी	1100.26	1086.30
6. अण्डमान और निकोबार द्वीप	12.63	10.92
7. गुजरात	111.07	99.49
8. मध्यप्रदेश	47.13	53.42
9. छत्तीसगढ़	67.36	65.19
10. महाराष्ट्र	84.52	74.68
11. राजस्थान	36.29	31.33
12. गोवा	32.66	34.08
13. दादर और नगर हवेली	43.97	41.25
14. हरियाणा	166.72	155.10
15. हिमाचल प्रदेश	48.75	475.00
16. जम्मू और काश्मीर	81.31	66.30
17. पंजाब	210.06	194.56
18. उत्तरप्रदेश	140.37	134.13
19. दिल्ली	10.51	13.08
20. उत्तरांचल	94.24	88.93
21. बिहार	152.32	99.78
22. झारखण्ड	67.61	62.10
23. उड़ीसा	57.33	51.59
24. पश्चिम बंगाल	127.50	129.73
25. अरूणाचल प्रदेश	2.94	2.98

26.	असम	49.26	41.25
27.	त्रिपुरा	39.21	34.74
28.	मणिपुर	59.84	85.97
29.	मेघालय	17.98	18.05
30.	नागालैण्ड	1.50	1.46
31.	मिजोरम	25.45	5.85
32.	सिक्कीम	2.83	5.01
अखिल भारत		**104.50**	**94.52**

स्रोत : रसायन तथा उर्वरक मंत्रालय।

कृषि में सकल पूंजी निर्माण

वर्ष	कृषि में निवेश (करोड़ रु. में)			कृषि सकल निवेश में हिस्सा (प्रतिशत)		स्थिर कीमतों पर स.घ.उ. के प्रतिशत के रूप में कृषि में निवेश
	कुल	सार्वजनिक	निजी	सार्वजनिक	निजी	
1990—91	14836	4395	10441	29.60	70.40	1.92
1995—96	15690	4849	10841	30.90	69.10	1.57
1996—97	16176	4668	11508	28.90	71.10	1.51
1997—98	15942	3979	11963	25.00	75.00	1.43
1998—99	14895	3877	11025	26.00	74.00	1.26
1999—00	17304	4221	13083	24.40	75.60	1.37
नई श्रृंखला (1999—00 के मूल्यों पर)						
1999—00	43473	7716	35757	17.7	82.3	2.2
2000—01	38735	7155	31580	18.5	81.5	1.9
2001—02	47043	8746	38297	18.6	81.4	2.2
2002—03	46823	7962	38861	17.0	83.0	2.1
2003—04	45132	9376	35756	20.8	79.2	1.9
2004—05	48576	10267	38309	21.1	78.9	1.9
2005—06*	54539	13219	41320	24.2	75.8	1.9

* त्वरित अनुमान

स्रोत : केन्द्रीय संख्यिकीय संगठन।

परिवारों का वितरण जोते जाने वाले खेत के आधार के अनुसार (1999–2000) हेक्टेयर में

	0.01–0.4 हेक्टेयर	0.4–1.0 हेक्टेरय	1.0–2.0 हेक्टेरय	2.0–4.0 हेक्टेरय	4.0 हेक्टेरय से अधिक
संपूर्ण भारत (%)	37.7	28.4	18.9	9.9	5.0
मध्यप्रदेश (%)	17.5	27.7	26.6	17.9	9.1

स्रोत : भारत में रोजगार और बेरोजगारी की स्थिति, ***NSSO,*** *55वां दौर*

ग्रामीण भारत में 2400 किलो कैलोरी के ख़र्च समूह की उपयोग प्रवृत्ति (1999–2000)

वस्तु	प्रति व्यक्ति मासिक ख़र्च (रुपए में)
अनाज (गेहूं, चावल आदि)	*117.77*
चना	*0.79*
अनाज के विकल्प	*0.41*
दाल एवं दाल के उत्पाद	*22.12*
दूध एवं दूध के उत्पाद	*57.68*
खाद्य तेल	*21.93*
मांस–मछली व अन्य	*20.14*
सब्जियां	*35.43*
ताजे फल	*8.32*
सूखे फल	*1.65*
शक्कर	*14.52*
नमक	*1.19*
मसालें	*15.28*
पेय पदार्थ (चाय, कॉफी आदि)	*24.55*
कुल भोजन पर ख़र्च	***341.79***
पान	*3.47*
तम्बाखू	*9.01*
नशे की वस्तुएं (शराब, भांग) आदि	*4.23*
ईंधन व विद्युत	*43.65*
कपड़े	*39.22*
चप्पल–जूते	*6.30*
विभिन्न उपभोक्ता सामग्री (साबुन, तेल, मंजन आदि)	*30.03*
विभिन्न उपभोक्ता सेवाएं	*31.66*

मकान किराया	*1.58*
कर	*0.91*
शिक्षा	*10.74*
चिकित्सा (संस्थागत)	*7.35*
चिकित्सा (इसंस्थागत)	*25.76*
टिकाऊ उपभोक्ता सामग्री	*10.83*
अखाद्य सामग्री पर कुल खर्च	*224.74*
(स्रोत : भारत में पारिवारिक उपभोक्ता ख़र्च 1999–2000, मुख्य परिणाम, राष्ट्रीय सैंपल सर्वेक्षण 55वां दौर, रिपोर्ट नं. 454)	

दुनिया की दस बड़ी बीज कंपनियां

	कंपनी	2004 में बीज की बिक्री (मिलियन डालर)
1.	मोंसेंटो (यूएस) + सेमिजिन (मोनसेंटा द्वारा अधिग्रहीत मार्च, 2005)	2,277 + 526 प्रोफॉर्मा = 2,803
2.	डूपोंट / पायनीयर (यूएस)	2,600
3.	साइजेंटा (स्वीटजरलैंड)	1,239
4.	ग्रुप लिमाग्रेन (फ्रांस)	1,044
5.	के डब्ल्यू एस एजी (जर्मनी)	622
6.	लेंड ओ लैक्स (यूएस)	538
7.	साकाता (जापान)	416
8.	बायेर क्रॉप साइन्स (जर्मनी)	387
9.	तैकैई (जापान)	366
10.	डीएलएफ–ट्राइफोलियम (डेनमार्क)	320
(ईटीसी ग्लोबल सीड इंडस्ट्री के वर्ष 2005 के रिपोर्ट के आधार पर)		

मध्यप्रदेश के खेती से संबंधित विभिन्न आंकड़े

फसल समूहवार उत्पादन मूल्य (लाख रुपए)

फसलें	2004–2005	2005–2006	प्रतिशत वृद्धि (2005–2006 में 2004–2005 से)
खाद्यान्न	751987	760805	1.17
दलहन	468315	528065	12.76
तिलहन	729198	860449	18.00

प्रमुख खाद्यान्न फसलों का क्षेत्राच्छादन (हजार हेक्टर में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
धान	1776.36	1681.31	1718.79	1685.72	1710.65	(+) 1.48	(–) 0.73
कोदो कुटकी	403.79	380.76	365.90	335.64	315.01	(–) 6.15	(–) 6.04
गेहूं	3703.79	3381.57	4091.06	4200.33	3784.70	(–) 9.90	(+) 2.63
कुल खाद्यान्न	**11858.71**	**11407.97**	**12795.67**	**12550.99**	**11886.91**	**(–) 5.29**	**(+) 1.01**

प्रमुख खाद्यान्न फसलों का उत्पादन (हजार मीटरिक टन में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
धान	2539.00	1547.70	1625.40	1964.20	2484.40	(+) 41.68	(+) 1.97
कोदो कुटकी	94.79	77.49	108.62	86.64	88.68	(+) 2.35	(–) 0.22
गेहूं	6000.97	4923.41	7364.63	7327.41	6199.74	(–) 15.39	(+) 4.74
कुल खाद्यान्न	**14454.65**	**11267.43**	**16833.56**	**14771.26**	**14277.10**	**(–) 3.15**	**(+) 2.47**

दलहन फसलों का क्षेत्राच्छादन

(हजार हेक्टर में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
अरहर	305.45	303.50	315.14	318.37	323.42	(+) 1.59	(+) 1.63
चना	2553.93	2470.63	2791.34	2692.59	2540.51	(–) 5.64	(+) 0.76
कुल दलहन	**4179.66**	**4151.64**	**4592.67**	**4483.92**	**4331.64**	**(–) 3.40**	**(+) 1.50**

दलहन फसलों का उत्पादन

(हजार मीटरिक टन में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
अरहर	250.58	187.88	255.71	247.63	241.65	(–) 2.41	(+) 2.06
चना	2408.17	1713.41	2584.94	2474.59	2377.94	(–) 3.91	(+) 3.48
कुल दलहन	**3226.23**	**2378.37**	**3489.50**	**3353.27**	**3260.63**	**(–) 2.76**	**(+) 3.71**

प्रमुख तिलहन फसलों का क्षेत्राच्छादन

(हजार हेक्टर में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
राई सरसों	505.89	369.47	536.68	761.50	830.69	(+) 9.09	(+)18.71
सोयाबीन	4449.68	4190.55	4212.43	4594.27	4590.03	(–) 0.09	(+) 1.55
कुल तिलहन	**5601.65**	**5163.13**	**5375.62**	**5982.93**	**6067.89**	**(+) 1.42**	**(+) 3.12**

प्रमुख तिलहन फसलों का उत्पादन (हजार मीटरिक टन में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
राई सरसों	459.21	239.81	580.38	756.20	856.49	(+) 13.26	(+)27.06
सोयाबीन	3735.02	2673.66	4652.57	3760.29	4813.92	(+) 28.02	(+) 8.86
कुल तिलहन	**4567.64**	**3143.89**	**5623.59**	**4908.33**	**6052.44**	**(+) 23.31**	**(+) 10. 61**

वाणिज्यिक फसलों का क्षेत्राच्छादन (हजार हेक्टर में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
गन्ना	68.11	68.95	69.52	73.61	87.17	(+) 18.42	(+) 5.75
कपास	541.50	559.32	564.10	591.28	603.32	(+) 2.04	(+) 2.76
कुल खाद्यान्न							

प्रमुख वाणिज्यिक फसलों का उत्पादन
(हजार मीटरिक टन में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
गन्ना	1616.40	1562.98	1873.68	1797.95	2240.93	(+) 24.64	(+) 8.26
कपास	202.81	199.44	325.89	327.51	359.95	(+) 9.91	(+)17.86
कुल खाद्यान्न							

बी. टी. काटन का क्षेत्राच्छादन एवं उत्पादन

वर्ष	क्षेत्राच्छादन (हेक्टर में)	उत्पादन हजार (गांठो में)
1	2	3
2002–2003	1470	2798.7
2003–2004	12864	41801.7
2004–2005	85739	242928.9
2005–2006	126713	269204.3
2006–2007	301782	––

प्रमुख मसालों का क्षेत्राच्छादन

(हेक्टर में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
मिर्च	39938	44180	49062	47091	46658	(–) 0.92	(+) 3.82
अदरक	4967	5204	5084	5233	5757	(+) 10.01	(+) 3.05
लहसून	22723	22712	33196	42292	33717	(–) 20.18	(+)15.15
धनिया	103789	62078	125110	136388	101352	(–) 25.69	(+) 7.68
कुल मसाले	**195905**	**144706**	**239867**	**265811**	**207563**	**(–) 21.91**	**(+) 7.51**

प्रमुख मसालों का उत्पादन

(मीटरिक टन में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
मिर्च	22209	31692	38429	42922	42479	(–) 1.03	(+)17.36
अदरक	6813	5337	6296	5930	7237	(–) 22.04	(+) 2.29
लहसून	85596	76607	137888	178518	125221	(–) 29.86	(+)17.43
धनिया	37978	12675	46979	52576	38130	(–) 27.48	(+)15.38
कुल मसाले	**152997**	**126855**	**230276**	**280581**	**213675**	**(–) 23.85**	**(+)15.74**

प्रमुख साग, सब्जी फसलों का क्षेत्रफल

(हेक्टर में)

फसलें	2001–02	2002–03	2003–04	2004–05	2005–06	गतवर्ष से प्रतिशत वृद्धि / कमी	वृद्धि दर
1	2	3	4	5	6	7	8
आलू	38419	40903	46578	47602	45999	(–) 3.37	(+) 5.25
शकरकन्द	3727	3777	3841	4192	4191	(–) 0.02	(+) 3.45
प्याज	23100	24663	31001	35704	27699	(–) 5.59	(+) 7.61

मटर	3546	2393	4280	17278	18084	(–) 4.66	(+)68.80
टमाटर	16057	16956	18740	18254	22388	(+) 22.65	(+) 7.66
फूल गोभी	5960	6317	7347	7665	9716	(+) 26.76	(+)12.42
कुल सब्जी	**140852**	**144095**	**163474**	**184950**	**195977**	**(+) 5.96**	**(+) 9.53**

मध्यप्रदेश से संबंधित उक्त आंकड़ों का स्रोतः– मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2006–2007

प्रस्तुतिः– शिवनारायण गौर, मो. 94254 33229 **e-mail shivnarayangour@gmail.com**